मत्स्यवाणी

वर्ष–4 अंक–1 माह–जून, 2025

मात्स्यकी महाविद्यालय, किशनगंज
बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

मुख्य संरक्षक

डॉ इन्द्रजीत सिंह

कुलपति

बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, पटना

संरक्षक

श्री मनीष कुमार, IAS

मत्स्य निर्देशक, पशु एवं मत्स्य संसाधन विभाग

बिहार सरकार ,पटना

सम्पादक मण्डल

मुख्य संपादक	सम्पादक	प्रबंध सम्पादक
डॉ वी पी सैनी अधिष्ठाता मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज (बिहार)	**तापस पॉल** सहायक प्राध्यापक मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज (बिहार)	**डॉ नरेंद्र कुमार वर्मा** सहायक प्राध्यापक मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज (बिहार)

सदस्य संपादकीय मण्डल

डॉ० टुन टुन सिंह व्याख्याता मत्स्य प्रशिक्षण एवं प्रसार केन्द्र, मीठापुर, पटना।	**डॉ अभिषेक ठाकुर** सहायक प्राध्यापक मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज(बिहार)	**डॉ ममता सिंह** सहायक प्राध्यापिका मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज(बिहार)

सदस्यता शुल्क

सदस्यता शुल्क

1. व्यक्तिगत सदस्यताः 200 रू/वर्ष
2. संस्थागत सदस्यताः 400 रू/वर्ष
3. किसान सेवा केन्द्रः 300 रू/वर्ष
4. प्रति कापी : 100 रू

खाता विवरण

खाताधारक का नामः College of Fisheries (BASU)

बैंकः एसबीआई, डीकेएसी कैंपस किशनगंज

खाता संख्याः 41625645264

IFSC:SBIN0061241

विज्ञापन दरें

क्र.स.	विवरण	राशि	क्र.स.	विवरण	राशि
1.	अन्तिम पूरा पृष्ठ	10,00(	4.	अन्दर पूरा पृष्ठ सामान्य	3,000
2.	मुख्य पृष्ठ के पीछे/अंतिम पृष्ठ के पीछे/अन्दर पूरा पृष्ठ	8,000	5.	अन्दर आधा पृष्ठ सामान्य	2,000
3.	मुख्य पृष्ठ के पीछे/अंतिम पृष्ठ के पीछे/अन्दर आधा पृष्ठ	5,000	6.	अन्दर चौथाई सामान्य पृष्ठ	1,000

सदस्यता , विज्ञापन एवं आलेख के लिए संपर्क

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए	आलेख के लिए
डॉ नरेंद्र कुमार वर्मा सहायक प्राध्यापक, मात्स्यिकी महाविद्यालयए किशनगंज (बिहार) 855107 मो०:7523085610 ई–मेलः–matsyavani@gmail.com	**तापस पॉल** सहायक प्राध्यापक, मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज (बिहार) 855107 **मो०:**7006414883 **ई–मेलः**–matsyavani@gmail.com

कवर डिजाइनः– श्री तुषार कुमार (फोटोग्राफर) मात्स्यिकी महाविद्यालय किशनगंज (बिहार)

सम्पादकीय

हमें अपार हर्ष है कि "मत्स्वाणी" का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत हो रहा है। यह पत्रिका न केवल मत्स्य विज्ञान और जल कृषि से जुड़े ताज़ा अनुसंधानों, तकनीकी नवाचारों तथा सरकारी योजनाओं को साझा करती है, बल्कि मछुआरों और मत्स्य व्यवसाय से जुड़े सभी हितधारकों के बीच ज्ञान–विनिमय का एक सेतु भी है।

आज का युग विज्ञान और तकनीक का युग है। मत्स्य पालन अब केवल पारंपरिक आजीविका का साधन नहीं रह गया है, बल्कि यह एक सशक्त उद्योग और अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण स्तंभ बनता जा रहा है। इस बदलते परिदृश्य में आवश्यक है कि हमारे मछुआरे भाई/बहन नई जानकारी से लैस हों, ताकि वे उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ पर्यावरण संरक्षण और सतत विकास की राह पर भी अग्रसर हो सकें।

इस अंक में आपको जलवायु परिवर्तन और मत्स्य पालन पर उसके प्रभाव, तालाब प्रबंधन की उन्नत तकनीकें, मछलियों के स्वास्थ्य प्रबंधन, जल की गुणवत्ता संरक्षण, तथा आधुनिक विपणन प्रणालियों जैसे विषयों पर विस्तृत लेख पढ़ने को मिलेंगे। साथ ही, महिला शक्ति के योगदान और युवाओं की भागीदारी को भी विशेष स्थान दिया गया है।

हमारा विश्वास है कि यह पत्रिका केवल सूचना देने का माध्यम नहीं, बल्कि संवाद और सहभागिता का मंच बनेगी। आपके सुझाव और अनुभव हमें और समृद्ध करेंगे। आइए, मिलकर हम मत्स्य पालन को केवल एक व्यवसाय न मानकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था, पोषण सुरक्षा और रोजगार सृजन का आधार बनाएं।

अंत में, मैं सभी लेखकों, सहयोगियों और पाठकों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके सहयोग से यह अंक संभव हो पाया है।

डॉ. वी पी सैनी

इस अंक के आलेख

आलेख	पृ.सं.
तालाब प्रबंधन से सम्बंधित पूछे जाने वाले प्रश्न एवं उनके उत्तर–ममता सिंह एवं वेद प्रकाश सैनी	1-6
एकीकृत मछली सह मखाना खेती–मनीष कुमार, हर्षित पाण्डेय	7-9
स्मार्ट एक्वापोनिक्सः टिकाऊ मछली पालन के लिए एक आधुनिक दृष्टिकोण–आतिरा फारूक, आर्या सिंह, विवेक चौहान, सचिगुप्ता, प्रणव उपाध्याय	10-12
एकल–उपयोग प्लास्टिकः चुनौतियाँ, पर्यावरणीय प्रभाव और अपशिष्ट प्रबंधन समाधान–मयूरी नाग, कुंडु डोमा, भूटिया, भौतिक सावलिया, तपस पॉल	13-17
एक्वामिमिक्री प्रणालीः झींगा पालन के लिए एक प्रभावी उपाय–आर्या सिंह, विवेक चौहान, शशांक सिंह, ज्योति सरोज	18-22
सतत मत्स्यपालनः आर्थिक समृद्धि और पर्यावरण संतुलन की दिशा में बढ़ता कदम–नीलेश कुमार चन्द्र पाल सिंह किशन सिंह संगीता कुमारी	23-26
हर्बल अर्कों का मत्स्य कायिकी पर सकारात्मक प्रभाव–राजेश कुमार, राजीव रंजन	27-30
बायोफ्लोक तकनीकी से मछली पालन पद्धति–नरेंद्र कुमार वर्मा	31-34
क्रस्टेशियन उपोत्पाद (काइटिन एवं काइटोसन) के औद्योगिक अनुप्रयोग–प्रिंस राज, रुकसार परवीन	35-37
मछली के लिए जीवित खाद्य जीवों का महत्व–नरेश राज कीर, उदय कुमार	38-40
मत्स्य उत्पाद को सुरक्षित रखने के उपाय–डॉ॰ मोहम्मद अमन हसन, डॉ॰ परमानंद प्रभाकर	41-44
मत्स्य पालन में महिलाओं का योगदानः विकास की एक छुपी हुई ताकत–आदित्य कुमार	45-52
जलीय पारिस्थितिकी तंत्र पर कपड़ा रंगों से होने वाले प्रभाव–शिवम दूबे, लक्ष्मीपति एम टी, सचिन ओंकार खैरनार, लक्ष्मी प्रसाद, ए.टी. रामचंद्र नाइक, नरेंद्र कुमार मौर्य, बिनल राजेशभाई खलासी, ब्रम्हदेव यादव	53-56
जलकृषि के लिए जलवायु परिवर्तन जनित दुष्प्रभाव–समीक्षा मिश्रा और सुजाता साहू	57-61

ई–समाधान

मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज आपके द्वार

उद्देश्य मत्स्य पालन में होने वाली तकनीकी बाधाओं का उचित समाधान कर किसान भाईयो को होने वाले नुकसान से बचाना।

किसानों को घर/फार्म पर ही हर सम्भव तकनीकी सलाह उपलब्ध कराना।

कार्यक्रम का दिन व समय

माह के प्रत्येक प्रथम एवं तृतीय शनिवार

शाम 4:00 बजे

जूम लिंक:

आईडी: 5579372803 कुंजिका: CoFK ZOOM

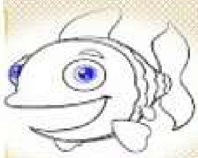

मात्स्यिकी महाविद्यालय

बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

अर्राबारी, जिला: किशनगंज – 855107

मो: 7523085610 या 7976237240

Email: deancof-basu.bih@gov.in ; Web: basu.org.in

तालाब प्रबंधन से सम्बंधित पूछे जाने वाले प्रश्न एवं उनके उत्तर

ममता सिंह एवं वेद प्रकाश सैनी
मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

प्रश्न 1: मछली पालन के दौरान तालाब प्रबंधन की जरुरत कब कब पड़ती है?

उत्तर: मछली पालन के लिए तालाब प्रबंधन मुख्यतः तीन स्तर पर किया जाता हैं जोकि इस प्रकार है– मछली बीज संचय पूर्व प्रबन्धन, मछली बीज संचय के समय प्रबन्धन एवं मछली बीज संचय पश्चात प्रबन्धन।

प्रश्न 2: मछली बीज संचयन के पहले किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तर: तालाब में मछली बीज संचयन से पहले उसमे से जलीय वनस्पतितयों, जलीय कीटों, एवं अवांछित मछलियों का हटाना अति आवश्यक होता हैं।

प्रश्न 3: तालाब में सामान्यतः किस प्रकार की जलीय वनस्पतियां पायी जाती हैं ?

उत्तर: तालाब में पाई जाने वाली जलीय वनस्पतियों का विवरण निम्न प्रकार है: (1) तालाब के किनारे उगने वाली जड़दार वनस्पतियां, (2) सतह पर तैरने वाली वनस्पतियां, (3), एवं जलमग्न वनस्पतियां।

मार्सीलिया

टाइफा

आइपोमिया

सैजीटेरिया

साइप्रस

जसिया

तालाब के तट पर उगने वाले जड़दार पौधे

आइकोर्निया

पिस्टिया

तालाब के पानी की सतह पर तैरने वाले पौध

हाइड्रिला

वैलिसनेरिया

कारा

निम्फिया

तालाब मे पाये जाने वाले जलमग्न पौध

प्रश्न 4: तालाब से जलीय वनस्पतियों को कैसे नियंत्रित किया जाता है?

उत्तरः जलीय वनस्पतियों (खरपतवार) का नियंत्रण निम्न प्रकार से कर सकते है: (1) हाथ से अथवा जाल चला कर बाहर निकालना, (2) जैविक विधि द्वारा, जिसमे की वनस्पतियों को आहार के रूप में खाने वाली मछलियों (जैसे ग्रास कार्प) को अधिक संख्या में पाला जाता है, (3) रासायनिक विधि से, जिसमे रासायनिक खरपतवार नाशकों का प्रयोग किया जाता है।

प्रश्न 5: सतह पर तैरने वाली जलीय वनस्पतियों के नियंत्रण के लिए किस रसायन का प्रयोग किया जाता है?

उत्तरः सतह पर तैरने वाले पौधों के उन्मूलन के लिए 2–4 डी का प्रयोग किया जाता है। यदि जलीय पौधे का वजन 100 ग्राम है तो 10 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम के दर से, यदि पौधे का वजन 100–500 ग्राम है तो 20 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम की दर से और यदि पौधे का वजन 500 ग्राम से अधिक है तो 30 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम की दर से किया जाता है।

प्रश्न 6: जलमग्न जलीय वनस्पतियों के उन्मूलन के लिए किस रसायन का प्रयोग किया जाता है ?

उत्तरः जलमग्न जलीय वनस्पतियों के उन्मूलन के लिए कई रसायन उपलब्ध है जैसे की सोडियम आर्सेनेट 50–60 किलोग्राम प्रति हैक्टर, अमोनिया 225 किलोग्राम प्रति हैक्टर अथवा पेराक्वेट 50 किलोग्राम प्रति हेक्टर की दर से तालाब में छिड़काव किया जाता है।

प्रश्न 7: तलाब में कौन कौन से अवांछित जलीय किट पाए जाते है ?

उत्तरः तालाब में अधिकांश रूप से साइनस्टर (बीटल), बास (बेलस्टोमा), वाटर स्कॉर्पियन (नेपा), वाटर स्टिक इन्सेक्ट (रानातरा), बैक स्वीम्मर आदि कीट पाये जाते हैं ।।

प्रश्न 8: तालाब में पाए जाने वाले अवांछित जलीय कीटों का उन्मूलन कैसे किया जाता हैं ?

रानाट्रा

जल बिच्छ

साइबिस्टर बीटल

जाइंट वाटर बग

ड्रेगनफ्लाई

नोटोनेक्टा

तालाब मे पाये जाने वाले प्रमुख कीट

उत्तरः तालाब में पाए जाने वाले अवांछित जलीय कीटों के उन्मूलन के कई तरीके हैं जैसे की (1) बारीक छेद वाला जाल चला कर बाहर निकालना, (2) साबुन एवं तेल के घोल का प्रयोग कर, इसमें सरसों अथवा अन्य वनस्पति तेल को कपडे धोने वाले साबुन (56 किलोग्राम तेल एवं 18 किलोग्राम साबुन) के साथ घोल बनाकर पानी की सतह पर सामान रूप से छिड़का जाता है, (3) डीजल–इमल्सीफायर का प्रयोग कर, इसमें डीजल तथा इमल्सीफायर डाइऑक्साइड 1011 का प्रयोग

किया जाता है, 1 लीटर डीजल में 0.75 मिलीग्राम इमल्सीफायर एवं 40 मिलीलीटर पानी के मिश्रण का घोल तैयार कर 1040.75 मिलीलीटर प्रति 200 वर्गमीटर की दर के छिड़काव किया जाता है, (4) तारपीन के तेल का छिड़काव 75 लीटर प्रति हेक्टर की दर से किया जाता है।

प्रश्न 9: तालाब में पायी जाने वाली अनुपयोगी एवं अवांछित मछलियों का उन्मूलन कैसे किया जाता है ?

उत्तर: तालाब में पायी जाने वाली अनुपयोगी एवं अवांछित मछलियों के उन्मूलन के कई तरीके हैं जैसे की (1) तालाब तो सुखाकर अवांछित मछलियों को बाहर निकालना, (2) जाल चला कर अवांछित मछलियों को बाहर निकालना, तथा (3) रसायनों का प्रयोग कर।

प्रश्न 10: तालाब में पायी जाने वाली अनुपयोगी एवं अवांछित मछलियों के उन्मूलन के लिए किन रसायनों का प्रयोग किया जाता है ?

उत्तर: (1) महुआ की खली का प्रयोग 2000–2500 किलोग्राम प्रति हेक्टर मीटर अथवा 200–250 पीपीएम की दर से किया जाता है, (2) डेरिस रुट पाउडर का प्रयोग 60–100 किलोग्राम प्रति हेक्टर मीटर अथवा 6–10 पीपीएम की दर से किया जाता है, (3) क्रोटन बीज पाउडर का प्रयोग 30–50 किलोग्राम प्रति हेक्टर मीटर अथवा 3–5 पीपीएम की दर से किया जाता है तथा (4) बेरिंगटोनिआ बीज पाउडर का प्रयोग 150 किलोग्राम प्रति हेक्टर मीटर अथवा 15 पीपीएम की दर से किया जाता हैं।

प्रश्न 11:तालाब में खाद एवं उर्वरक का उपयोग क्यों किया जाता हैं?

उत्तर: अन्य कृषि कार्यो की तरह मछली पालन में भी तालाब की जैविक उत्पादकता बढाने के लिये नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटेशियम को पोषक तत्वों के रूप में उपयोग किया जाता है एवं इनकी आपूर्ति कार्बनिक खाद तथा अकार्बनिक उर्वरकों के द्वारा होती है।

प्रश्न 12: तालाब में खाद एवं उर्वरक का उपयोग किस मात्रा में किया जाता हैं?

उत्तर: तालाब में मछलियों के लिए प्राकृतिक भोजन की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु निम्नलिखित कार्बनिक एवं अकार्बनिक उर्वरकों का उपयोग किया जाता है। जिसका विवरण निम्न प्रकार हैं :

मिट्टी में उपस्थित कार्बन के अनुसार गोबर की खाद का उपयोग

मिट्टी में उपस्थित कार्बन	गोबर की खाद का उपयोग (किग्रा प्रति है/वर्ष)	गोबर एवं अन्य जैविक खाद के उपयोग का तरीका
उच्च कार्बन (2 प्रतिशत)	10,000–15,000	गोबर की खाद 15 टन/हे./वर्ष (3 टन तालाब की तैयारी के समय एवं शेष मासिक किश्तों में) **अथवा** मुर्गी की बीट 4 टन/हे./वर्ष (मासिक किश्तों में) **अथवा** गोबर गैस प्लांट स्लरी 5 टन/हे./वर्ष (मासिक किश्तों में)
मध्यम कार्बन (1–2 प्रतिशत)	15,000–20,000	
निम्न कार्बन (1 प्रतिशत)	25,000–30,000	

मिट्टी में उपस्थित नाइट्रोजन के अनुसार रासायनिक खादोंका उपयोग

नाईट्रोजन युक्त उर्वरक (यूरिया)

मिट्टी में उपस्थित नाईट्रोजन (मिग्रा / 100 ग्राम मिट्टी)	यूरिया का उपयोग (किग्रा प्रति है. / वर्ष)
उच्च (51–70)	375
मध्यम (26–50)	440
निम्न (25 अथवा कम)	670
फास्फेट युक्त उर्वरक (एसएसपी)	
मिट्टी मे उपस्थित फास्फेट (मिग्रा / 100 ग्राम मिट्टी)	**एसएसपी का उपयोग (किग्रा प्रति है. / वर्ष)**
उच्च (7–12)	375
मध्यम (4–6)	550
अल्प (3 अथवा कम)	750

प्रश्न 13: तालाब में चूने का उपयोग क्यों और किस मात्रा में किया जाता है ?

उत्तर: तालाब में चूने का उपयोग करना बहुत ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके उपयोग से तालाब की मिट्टी में अम्लीयता कम होती है, कैल्शियम उपलब्ध होता है जिससे जैविक पदार्थो का विघटन तेजी से होता है एवं हानिकारक तत्व नष्ट होते हैं, मछलियों पर परजीवियों का प्रभाव कम होता है, तालाब में घुलनशील ऑक्सीजन की मात्रा बढ़ जाती हैं। चूने (कैल्शियम कार्बोनेट, पत्थरदार चूने) का तालाब की मिट्टी की जांच करा कर उर्वरकों के उपयोग से 2 सप्ताह पहले मिट्टी की रासायनिक अवस्था के अनुसार निम्न प्रकार करते हैं:

पी.एच. मान	मिट्टी की अवस्था	चूना प्रति हैक्टर
4.0–4.5	अति अम्लीय	1,000 किलो
4.5–5.5	मध्य अम्लीय	700 किलो
5.5–6.5	मंद अम्लीय	500 किलो
6.5–7.5	लगभग उदासीन	200 किलो

प्रश्न 14: संचय के लिये मछलियों की मुख्य प्रजातियां कौन कौन सी हैं ?

उत्तर: तालाब में कतला (भाकुर), रोहू, मृगल (नैनी), सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प, कॉमन कार्प, मागुर, सिंघी, एवं पंगास का संचय किया जा सकता हैं।

प्रश्न 15: तालाब में संचय के लिये मत्स्य बीजों की सं ख्या एवं अनुपात क्या होना चाहिए ?

उत्तर: तालाब में संचित मछलियों की संख्या में बढ़ोत्तरी करने से उत्पादन शुरुआात में तो बढ़ता है परन्तु कुछ समय पश्चात यह घटने लगता हैं क्योकि इससे उनमें भोजन, ऑक्सीजन एवं रहने के स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा बढ़ जाती हैं तथा तालाब में मछलियों के अधिक मलमूत्र के जमा होने के कारण पानी की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं अत: संचय के लिये 7–10 हजार / हे. मत्स्य अंगुलिकाऐं पर्याप्त होती हैं। तालाब में उपलब्ध पोषक तत्वों के समुचित उपयोग के लिए निम्नलिखित सारणी के अनुसार विभिन्न अनुपात में मत्स्य बीज का संचय करना उचित रहता हैं।

तालाब में संचय के लिये मत्स्य बीज की संख्या एवं अनुपात

मत्स्य प्रजाति	मत्स्य बीजों का संचय (प्रतिशत)			
	3 प्रजाति	4 प्रजाति	5 प्रजाति	6 प्रजाति
कतला	40	30	30	15
रोहू	30	30	15	20
मृगल (नैनी)	30	20	25	15
सिल्वर कार्प	–	–		20
ग्रास कार्प	–	–	10	10
कॉमन कार्प	–	20	20	20

प्रश्न 16: तालाब में संचय के लिए मछली के बीज की अवस्था कैसी होनी चाहिए ?

उत्तर: अधिक उत्पादन के लिए अंगुलिकाओं (40–80 मिमी) का संचय उपयुक्त रहता है क्योंकि मछली बीजों की यह अवस्था स्थानान्त्रण के लिए उपयुक्त रहती हैं एवं इस अवस्था मे मृत्यु दर भी कम होती हैं।

प्रश्न 17: मत्स्य बीज संचय के पश्चात तालाब प्रबंधन में किन किन बातों का ध्यान रखना चाहिए ?

उत्तरः मछलियों की अच्छी वृद्धि हेतु पूरक आहार की आवश्यकता होती है। मछलियों के पूरक आहार के लिये सामान्यतः सरसों की खली, चावल की भूसी, मछली का चूरा, विटामीन एवं अन्य लवण भी मिलाये जाते हैं। मछलियों को पूरक आहार की मात्रा उनके वजन का 3–5 प्रतिशत प्रति दिन निश्चित समय पर देनी होती हैं। तालाब में वनस्पति एवं जीवों के सड़ने से उत्पन्न होने वाली हानिकारक गैसे जो मछलियों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं की मात्रा पानी में कम करने एवं लाभदायक घुलनशील गैसो की मात्रा बढ़ाने के लिये समय–समय स्वचालित वायु यंत्रो का उपयोग किया जा सकता हैं। तालाब में पानी की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये उपलब्धता के आधार पर प्रत्येक तीन महीनें में 25–30 प्रतिशत तालाब का पानी बदलना चाहियें। मछलियों को 2–3 माह में एक बार जाल से पकड़कर उसकी जाँच करनी चाहिए जिससे मछली पालक को आहार आपूर्ति, मछलियों की बीमारियां अथवा उनकी वृद्धि का सही अनुमान होता रहता है। मछलियों में भी अन्य प्राणियों की तरह विभिन्न प्रकार के रोगों का प्रकोप हो जाता हैं। मछलियां जब स्वस्थ एवं निरोगी होती हैं तब तालाब में सहजता से रहती हैं तथा बारबार जल की सतह पर नहीं आती हैं जबकी रोग ग्रसित मछलियां बेचौन होकर असामान्य व्यवहार करने लगती हैं और विकृत तैराकी करती हैं। ऐसी स्थिति में जाल से मछलियों को निकाल कर उनका परीक्षण करके उचित उपचार करना चाहिए।

प्रश्न 18. तालाब में पानी की आदर्श गहराई कितनी होनी चाहिए?

उत्तरः तालाब की गहराई 1.5 से 2 मीटर उपयुक्त रहती है। इस परत पर तापमान और ऑक्सीजन संतुलित रहते हैं। कम गहराई पर पानी गर्म होकर ऑक्सीजन घटाता है जबकि अधिक गहराई में प्रकाश की कमी से उत्पादन कम होता है।

प्रश्न 19. मिश्रित मत्स्य पालन से क्या लाभ होता है?

उत्तरः मिश्रित मत्स्य पालन से तालाब का संपूर्ण उपयोग होता है। विभिन्न परतों पर रहने वाली मछलियाँ अलग–अलग आहार लेती हैं। इससे उत्पादन 2द्3 गुना तक बढ़ जाता है। किसानों को आर्थिक लाभ और बेहतर उपज दोनों मिलते हैं।

प्रश्न 20. तालाब में मछलियों को कृत्रिम आहार क्यों दिया जाता है?

उत्तरः प्राकृतिक आहार पर्याप्त नहीं होता। कृत्रिम आहार से प्रोटीन, वसा और कार्बोहाइड्रेट की पूर्ति होती है। इससे मछलियों की वृद्धि तेज होती है और वजन बढ़ता है। सही आहार उत्पादन व लाभ दोनों बढ़ाने में सहायक है।

प्रश्न 21. मछली बीज (फिंगरलिंग) की आदर्श लंबाई कितनी होनी चाहिए?

उत्तरः बीज की आदर्श लंबाई 10द्15 सेंटीमीटर होती है। इस आकार पर जीवित रहने की संभावना अधिक रहती है। फिंगरलिंग तालाब में आसानी से अनुकूलित होते हैं और तेजी से बढ़ते हैं। इससे उत्पादन समय पर और अच्छा मिलता है।

प्रश्न 22. मछलियों को रोग से बचाने के लिए क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए?

उत्तरः तालाब का नियमित उपचार करना चाहिए। मछलियों का घनत्व नियंत्रित रखना चाहिए। संतुलित आहार व साफ पानी देना जरूरी है। समय–समय पर चूना और दवाओं का छिड़काव करके रोगजनक सूक्ष्मजीवों का प्रभाव कम किया जा सकता है।

प्रश्न 23. मत्स्यपालन में घनत्व क्या होता है?

उत्तरः तालाब में डाली गई मछलियों की संख्या को घनत्व कहते हैं। मिश्रित मत्स्य पालन में सामान्यतः 7,000फिंगरलिंग प्रति हेक्टेयर डाले जाते हैं। अधिक घनत्व से रोग और मृत्यु बढ़ते हैं जबकि संतुलित घनत्व से उत्पादन बेहतर होता है।

प्रश्न 24. तालाब में शैवाल की अधिकता से क्या समस्या होती है?

उत्तरः अत्यधिक शैवाल से ऑक्सीजन की कमी हो जाती है। रात में श्वसन के कारण मछलियों की मृत्यु हो सकती है। पानी दुर्गंधयुक्त हो जाता है

और गुणवत्ता घटती है। इसलिए शैवाल को नियंत्रित रखना आवश्यक होता है।

प्रश्न 25. तालाब में मछली बीज छोड़ने का उपयुक्त समय कौन–सा है?

उत्तरः बीज छोड़ने का समय मानसून के बाद या जब पानी का स्तर स्थिर हो तब उपयुक्त है। इस समय पानी साफ रहता है, तापमान सामान्य होता है और मछलियों की जीवित रहने की संभावना अधिक रहती है।

प्रश्न 26. तालाब में पानी की गुणवत्ता की निगरानी कैसे की जाती है?

उत्तरः नियमित रूप से पानी का पीएच, घुलनशील ऑक्सीजन, अमोनिया और पारदर्शिता जाँची जाती है। साधारण उपकरणों और किट की मदद से यह संभव है। निगरानी से समय पर सुधारात्मक कदम उठाए जाते हैं जिससे मछलियों का स्वास्थ्य बना रहता है।

प्रश्न 27. तालाब में मछलियों को कितनी बार आहार देना चाहिए?

उत्तरः मछलियों को दिन में 2 बार सुबह और शाम आहार देना चाहिए। यह उनकी आयु, आकार और घनत्व पर निर्भर करता है। संतुलित और समय पर आहार देने से मछलियों की वृद्धि और उत्पादन दोनों बेहतर होते हैं।ों बेहतर होते हैं।

****

एकीकृत मछली सह मखाना खेती

[1]मनीष कुमार, [2]हर्षित पाण्डेय
[1]मात्स्यिकी महाविद्यालय, लेम्बुचेरा (त्रिपुरा)
[2]कृषि महाविद्यालय, पंतनगर (उत्तराखंड)

भारत दुनिया का अधिकांश मखाना उत्पादित करने वाला देश है। अकेले बिहार में वैश्विक उत्पादन का 90 प्रतिशत उत्पादन होता है। कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, खनिज और फाइबर का एक बड़ा स्रोत होने के अलावा, इस फसल के कई औषधीय उपयोग हैं। इसका उपयोग 3,000 से अधिक वर्षों से पारंपरिक चीनी चिकित्सा के साथ–साथ भारत की आयुर्वेदिक और यूनानी चिकित्सा प्रणालियों में किया जाता रहा है। इस प्रकार, मखाना एक चमत्कारिक फसल के रूप में देखा जा सकता है, जो गरीब और सीमांत किसानों को भोजन और आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने के अलावा, जलीय कृषि के साथ मिलकर बिहार की अन्यथा सीमांत आर्द्रभूमि की उत्पादकता को अधिकतम कर सकता है। भारत के अलावा, फॉक्स नट्स चीन, जापान, मलेशिया, थाईलैंड, फिलीपींस, नेपाल और बांग्लादेश सहित दक्षिण–पूर्व एशियाई देशों में एक प्रमुख फसल है। यह दुनिया के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अच्छी तरह से पनपता है। मखाना की व्यावसायिक खेती मुख्यतः पूर्वी भारत तक ही सीमित है, खास तौर पर बिहार में, जहाँ प्राथमिक उत्पादक जिले मधुबनी, दरभंगा, सीतामढ़ी, सहरसा, कटिहार, पूर्णिया, समस्तीपुर, सुपौल, किशनगंज और अररिया हैं। यूरीले फेरॉक्स एक महत्वपूर्ण जलीय फसल है, जो निम्फियासी परिवार से संबंधित है। इसे आमतौर पर मखाना, गौरगन नट या फॉक्स नट के नाम से जाना जाता है, और इसे तालाबों, भूमि तलछटों, ऑक्सबो झीलों, दलदलों और खाइयों जैसे स्थिर बारहमासी जल निकायों में उगाया जाता है। मखाना के बीजों को ब्लैक डायमंड भी कहा जाता है। इसके उचित विकास और वृद्धि के लिए अनुकूल वायु तापमान 20–35 डिग्री सेल्सियस, सापेक्ष आर्द्रता 50–90 प्रतिशत और वार्षिक वर्षा 100–250 सेमी होनी चाहिए। मखाना की खेती हजारों संसाधनहीन गरीब किसानों को आजीविका प्रदान करती है। यह नकदी फसल (सूखे मेवे) है और इसे पॉप्ड मखाना के रूप में बेचा जाता है जिसे आमतौर पर मखाना लावा के नाम से जाना जाता है।

मखाना की खेती: मखाना की खेती या तो 4–6 फीट की गहराई वाले बारहमासी जल निकायों में या फील्ड सिस्टम में की जाती है।

तालाब प्रणाली: मखाना की खेती प्राचीन पद्धति से की जाती है, इस प्रक्रिया में पिछली फसल के बचे हुए बीजों को अगली फसलों के लिए रोपण सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है, पुराने मखाना उगाने वाले तालाबों में बीज बोना आवश्यक नहीं है। हालांकि, खेती शुरू करने के, दो तरीके हैं: या तो सीधे बीज बोएँ या पौधों को पानी के विभिन्न निकायों में ले जाएँ। मखाना के अलावा, मांगुर (*क्लोरेयस मांगुर*), सिंघी (*हेटेरोप्नेस्टेस फॉसिलिस*), कोइ (*अनाबस टेस्टुडीनस*), गीरई (*चन्ना पंक्टेटस*) और बैंडेड गौरामी (*ट्राइकोगैस्टर फैसिआटस*) जैसी मछलियों का पालन कर के किसान अतिरिक्त उत्तपादन लेते हैं।

जल निकायों में पारंपरिक मखाना की खेती

सीधी बुवाई: सीधी बुवाई के लिए, दिसंबर के महीने में 80–90 किलोग्राम स्वस्थ्य बीजों को जलाशयों की ऊपरी सतह पर बिखेर दिया जाता है। बुवाई के 35–40 दिन बाद (दिसंबर–जनवरी), तालाब के तल पर बीज का अंकुरण शुरू हो जाता है और फरवरी के अंत और मार्च की शुरुआत तक, पौधे पानी की ऊपरी सतह समय पर आ जाते हैं। इस समय अतिरिक्त पौधों को हटाकर अथवा दूसरी जगह रोपकर पंक्ति से पंक्ति और पौधे से पौधे के

बीच 1×1 मीटर की इष्टतम दूरी बनाए रखी जाती है।

रोपाई विधिः स्वस्थ एवं युवा पौधों को मार्च–अप्रैल माह में पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे के बीच 1×1 मीटर के अंतर पर रोपा जाता है। रोपाई के लगभग दो माह बाद चमकीले बैंगनी एवं एकल फूल अनियमित रूप से दिखाई देने लगते हैं। फूल आने के 35–40 दिन बाद फल पूर्ण रूप से विकसित होकर परिपक्व हो जाते हैं। फल एवं पौधे का पूरा भाग कांटेदार होता है। पूर्ण परिपक्वता प्राप्त होने के बाद स्पंजी फल फटने लगते हैं। फटने पर बीज पानी की सतह पर तैरने लगते हैं तथा 2–3 दिन बाद तालाब की तलहटी में जाकर बैठ जाते हैं। फूलों के विकसित होने एवं परिपक्व फलों के फटने की प्रक्रिया सितम्बर माह तक जारी रहती है। सितम्बर अक्टूबर माह में स्थानीय यंत्र (गांजा) की सहायता से पेशेवर मजदूरों द्वारा जलाशयों की तलहटी से मखाना के सभी बीजों को एकत्रित कर लिया जाता है। कटाई के दो–तीन महीने बाद, शेष बीज (संग्रह के दौरान छोड़े गए) अगले फसल चक्र के दौरान अंकुरित होने लगते हैं।

खेत प्रणालीः इस प्रणाली के लिए पानी के गहराई 1 फीट तक राखी जाती है। उचित समय पर मखाना के पौधों को मुख्य खेत में स्थानांतरित कर देते हैं। शुरू में पौधों को नर्सरी में पाला जाता है। खेत और नर्सरी की उपलब्धता के आधार पर रोपाई फरवरी के पहले सप्ताह और अप्रैल के तीसरे सप्ताह के बीच हो सकती है। यह तकनीक मखाना की फसल की अवधि को चार महीने तक कम कर देती है।

मखाना की खेती की बारीकियों को निम्नलिखित तरीके से दर्शाया गया है

नर्सरीः चूंकि यह पूरी तरह से जलीय फसल है, इसलिए यह चिकनी, उच्च जल–धारण वाली मिट्टी में सबसे अच्छी होती है जो कार्बनिक पदार्थों से भरपूर होती है, इसलिए, इसकी खेती के लिए सबसे अच्छी मिट्टी चिकनी या चिकनी दोमट होती है। खेत को दो से तीन बार गहरी जुताई करके रोपण के लिए अच्छी तरह से तैयार किया जाता हैय फिर भी, यह सुनिश्चित करने के लिए कि अंकुरों को अच्छी तरह से पोषण मिले, जुताई से पहले क्रमशः 100:60:40 प्रति हेक्टेयर के अनुपात में एन, पी और के की खाद डाली जाती है। उसके बाद, खेत को समतल किया जाता है और लगभग दो फीट ऊंची मिट्टी की मेड़ से घेर दिया जाता है। दिसंबर में बीज बोए जाते हैं और जमीन को मेड़ की 1.5 फीट ऊंचाई तक पानी से भर दिया जाता है। एक हेक्टयेर खेत के लिए बीस किलो स्वस्थ्य बीज प्रयोह में लाया जाता है।

भूमि की तैयारीः भूमि तैयार करने के लिए दो से तीन बार गहरी जुताई की जाती है और फिर ट्रैक्टर से चलने वाले औजार या डिजाइन हल का उपयोग करके पाटा लगाया जाता है। यह प्रक्रिया खेत की उपलब्धता के आधार पर फरवरी के पहले और दूसरे सप्ताह के बीच हो सकती है। रोपाई से पहले खेत के चारों ओर दो फीट ऊँचा मिट्टी का बाँध बनाया जाता है ताकि उचित जल स्तर बना रहे और बाँध की ऊँचाई तक पानी डाला जाता है। ट्रैक्टर–आधारित पडलर के दो से तीन बार चलाने से खेत में पानी भर जाता है। मखाना उत्पादन के लिए पडलिंग बहुत जरूरी है क्योंकि इससे खेत की निचली परत में पानी के नीचे की ओर रिसने में मदद मिलती है।

खाद और उर्वरकः तालाब की स्थिति में उगाए जाने पर मखाना को खाद या उर्वरक नहीं दिया जाता है। हालांकि, खेत की स्थिति में मखाना पौधों को उचित पोषण प्रदान करते के लिए खाद और उर्वरक का उपयोग बहुत आवश्यक है। औसतन 100:60:40 किलोग्राम एन पी के, खेत में प्रयोग किया जाता है।

रोपाईः फसल को फरवरी के पहले सप्ताह से अप्रैल के दूसरे सप्ताह तक लगाया जा सकता है। फूल और फल मई के महीने से शुरू होकर अक्टूबर–नवंबर के महीने तक चलते हैं। फूल आने के 30–50 दिनों के बाद फल पूरी तरह से विकसित और परिपक्व हो जाते हैं।

कटाईः पारंपरिक प्रणाली में तालाब से मखाना की कटाई अगस्त से अक्टूबर के महीने में की जाती है। बीजों को स्थानीय रूप से गांजा के नाम से प्रचलित अर्धचंद्राकार उपकरण की मदद से एकत्रित किया जाता है। बीजों को फिर बेलनाकार कंटेनर में डाला जाता है जिसे स्थानीय रूप से औका या खांझी के नाम से जाना जाता है।

बीज उपजः तालाब प्रणाली में बीज उपज लगभग 1 टन प्रति हेक्टेयर तक होती है वहीं बेलनाकार कंटेनर में यह उपज–2.6 –3.0 टन प्रति हेक्टेयर दर्ज की गई है।

मखाना खेती की एकीकृत खेती विधिः मखाना के पौधे आने से पहले तालाब को साफ करने के लिए महुआ की खली (2.5 टन प्रति हेक्टेयर) डालकर मांसाहारी मछलियों को हटा दिया जाता है। साथ ही रोपाई करने की और फसल के फैलाव को अधिकतम करने के लिए अंतराल को भरने की सलाह दी जाती है (पौधे से पौधे के बीच 1×1 मी की दूरी पर कुल जल निकाय क्षेत्र का 10 शरण क्षेत्र बनाते हुए, विभिन्न कार्प फिंगरलिंग्स को 5000 हेक्टेयर (40 प्रतिशत रोहू और 20ः कतला, कॉमन कार्प और मृगल) में एकीकृत करें। तृतीयक फसल के रूप में, नवंबर और दिसंबर के बीच वाटर चेस्ट नट की कटाई की जाती है तथा दिसंबर और जनवरी में मछलियों की हार्वेस्टिंग की जाती है।

निष्कर्ष

हालाँकि मखाना एक स्वास्थ्यवर्धक, पोषक तत्वों से भरपूर और जैविक खाद्य पदार्थ है, फिर भी इसके उत्पादन की संभावनाओं का पूरा उपयोग नहीं हो पा रहा है। इसका मुख्य कारण है तकनीकी उपायों की कमी, विपणन व्यवस्था का असंगठित होना, आपूर्ति श्रृंखला की अक्षमता और सबसे बड़ी बात, किसानों और प्रसंस्करणकर्ताओं की कमजोर सामाजिक–आर्थिक स्थिति। बावजूद इसके, इसमें नए उत्पादों के विकास, मूल्यवर्धन और नवाचार की अपार संभावनाएं मौजूद हैं।

****

स्मार्ट एक्वापोनिक्सः टिकाऊ मछली पालन के लिए एक आधुनिक दृष्टिकोण

[1]आतिरा फारूक, [2]आर्या सिंह, [3]विवेक चौहान, [2]सचिगुप्ता, [4]प्रणव उपाध्याय
[1]मत्स्य विभाग, जम्मू–कश्मीर
[2]आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय(उत्तर प्रदेश)
[3]केरल मत्स्य एवं महासागरीय अध्ययन विश्वविद्यालय(कोच्चि)
[4]गोविंद बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय (उत्तराखंड)

जनसंख्या वृद्धि और शहरीकरण के कारण वैश्विक भोजन की मांग बढ़ रही है। पारंपरिक खेती के तरीके अक्सर बड़ी मात्रा में पानी, भूमि और रासायनिक उर्वरकों का उपयोग करते हैं, जो पर्यावरण को नुकसान पहुंचा सकते हैं। जवाब में, अभिनव कृषि समाधानों का पता लगाया जा रहा है। ऐसा ही एक समाधान स्मार्ट एक्वापोनिक्स है, एक प्रणाली जो स्मार्ट प्रौद्योगिकियों की मदद से एक्वाकल्चर (मछली की खेती) और हाइड्रोपोनिक्स (मिट्टी–कम पौधे की खेती) को जोड़ती है। यह दृष्टिकोण स्थायी खाद्य उत्पादन का समर्थन करता है, विशेष रूप से शहरी या जल–क्षेत्र क्षेत्रों में।

एक्वापोनिक्स क्या है?

एक्वापोनिक्स एक प्राकृतिक प्रणाली है जहां मछली और पौधों को एक वातावरण में एक साथ उठाया जाता है। मछली अपशिष्ट का उत्पादन करती है, जो लाभकारी बैक्टीरिया द्वारा पोषक तत्वों में बदल जाता है। ये पोषक तत्व पौधों को खिलाते हैं। बदले में, पौधे पानी को साफ करते हैं, जिसे बाद में मछली के टैंक में वापस भेज दिया जाता है। यह एक बंद लूप प्रणाली बनाता है जो कचरे को कम करता है और पानी का कुशल उपयोग करता है।

एक्वापोनिक्स एक एकीकृत मछली और संयंत्र उत्पादन प्रौद्योगिकी है, जिसमें अनिवार्य रूप से दो उप–सिस्टम, अर्थात, 'एक्वाकल्चर' और 'हाइड्रोपोनिक्स' शामिल हैं। अंतर्निहित सिद्धांत एक के बजाय दो फसलों का उत्पादन करने और मछली और पौधों के बीच पोषक तत्वों के संसाधनों को साझा करने और साझा करने के लिए कुशलता से पानी का उपयोग करना है। इस खेती प्रणाली का उपयोग आमतौर पर संसाधन सीमित और शहरी क्षेत्रों में एक एकीकृत प्रणाली में मछली और सब्जी दोनों को बढ़ाने के लिए किया जाता है। एक्वापोनिक्स में मछलियों के साथ बागवानी पौधों की संस्कृति शामिल है। कई पौधे एक के लिए उपयुक्त हैं

लक्षित मछली प्रजातियांः मोनोसेक्स तिलापिया (*ओरेओक्रोमिस निलोटिकस*), पंगासियस (*पंगसियनडन हाइपोफथाल्मस*) या उच्च घनत्व स्टॉकिंग को सहन करने वाली कोई भी प्रजाति एक्वापोनिक प्रणाली के लिए उपयुक्त हैं

पारंपरिक एक्वापोनिक्स सिस्टम को पानी की गुणवत्ता, मछली के स्वास्थ्य और पौधों के विकास की सावधानीपूर्वक निगरानी की आवश्यकता होती है। हालांकि, यह समय लेने वाली और श्रम–गहन हो सकता है। यह वह जगह है जहां स्मार्ट तकनीक एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

एक्वापोनिक्स में स्मार्ट प्रौद्योगिकी की भूमिका

स्मार्ट एक्वापोनिक्स सिस्टम प्रबंधन को स्वचालित करने और सुधारने के लिए उन्नत प्रौद्योगिकियों का उपयोग करता है।

ये प्रौद्योगिकियां किसानों को अपने एक्वापोनिक्स सिस्टम को अधिक सटीक और कुशलता से प्रबंधित करने में मदद करती हैं। उदाहरण के लिए, सेंसर यह पता लगा सकते हैं कि मछली के लिए ऑक्सीजन का स्तर बहुत कम है और स्वचालित रूप से वातन पंपों को ट्रिगर करता है। कृत्रिम

होशियारीगंभीर होने से पहले पौधे या मछली के स्वास्थ्य के मुद्दों की भविष्यवाणी कर सकता है।

स्मार्ट एक्वापोनिक्स का लाभ

स्मार्ट एक्वापोनिक्स के पारंपरिक खेती और बुनियादी एक्वापोनिक सिस्टम पर कई प्रमुख लाभ हैं:

- **जल संरक्षण**

स्मार्ट एक्वापोनिक्स मिट्टी की खेती की तुलना में 90 प्रतिशत कम पानी का उपयोग करता है क्योंकि पानी को सिस्टम के भीतर पुनर्नवीनीकरण किया जाता है। संेसर सटीक आवश्यकताओं का पता लगाकर पानी के अति प्रयोग या बर्बादी को रोकते हैं।

- **इंडोर एवं छत पर खेती के लिए सुविधाजनक**

क्योंकि पौधों को नियंत्रित वातावरण का उपयोग करके लंबवत या घर के अंदर उगाया जा सकता है, स्मार्ट एक्वापोनिक्स शहरी खेती के लिए आदर्श है जहां भूमि सीमित है।

- **समय के साथ श्रम और लागत कम होना**

  यद्यपि सेटअप लागत अधिक हो सकती है, स्मार्ट सिस्टम मॉनिटरिंग, फीडिंग और सफाई जैसे दैनिक कार्यों को स्वचालित करके दीर्घकालिक श्रम और रखरखाव की लागत को कम करते हैं।

- **कार्बनिक और रासायनिक मुक्त**

  किसी भी कृत्रिम उर्वरक या कीटनाशकों की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सिस्टम स्वाभाविक रूप से संतुलित है। यह स्मार्ट एक्वापोनिक्स पर्यावरण के अनुकूल और जैविक खाद्य उत्पादन के लिए उपयुक्त बनाता है।

- **साल भर का उत्पादन**

  तापमान और प्रकाश जैसे पर्यावरणीय कारकों को नियंत्रित करके, फसलों और मछली का उत्पादन वर्ष–दौर, मौसम या मौसम से स्वतंत्र किया जा सकता है।

फायदे के बावजूद, स्मार्ट एक्वापोनिक्स भी चुनौतियों का सामना करते हैं:

- **उच्च प्रारंभिक लागत**

  सेंसर, सॉफ्टवेयर और स्मार्ट उपकरण खरीदना महंगा हो सकता है, जिससे सिस्टम को अपनाने के लिए छोटे किसानों या शुरुआती लोगों के लिए कठिन हो जाता है।

- **तकनीकी ज्ञान**

  ऑपरेटरों को जैविक और तकनीकी दोनों प्रणालियों को समझना चाहिए। मछली स्वास्थ्य, पौधे के पोषण और डिजिटल उपकरणों का प्रबंधन करने के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।

- **सिस्टम विफलता जोखिम**

  यदि सिस्टम विफल हो जाता है या बिजली बाहर जाती है, तो यह मछली और पौधों दोनों को नुकसान पहुंचा सकता है। नुकसान को रोकने के लिए बैकअप सिस्टम और अलर्ट आवश्यक हैं।

- **डेटा सुरक्षा और सॉफ्टवेयर रखरखाव**

  प्रोग्राम का उपयोग करते समय, हमेशा डेटा उल्लंघनों या सॉफ्टवेयर की खराबी का जोखिम होता है। नियमित अपडेट और साइबर सुरक्षा उपायों की आवश्यकता है।

- **स्मार्ट एक्वापोनिक्स के अनुप्रयोग**

  स्मार्ट एक्वापोनिक्स का उपयोग विभिन्न सेटिंग्स में किया जा सकता है:

  - शहरी खेतीः छतों पर या शहरों के तहखाने में।
  - शैक्षणिक संस्थानः स्थायी कृषि और प्रौद्योगिकी सिखाने के लिए।
  - वाणिज्यिक खेतोंः बड़े पैमाने पर जैविक उत्पादन के लिए।
  - आपदा क्षेत्रः सूखे या मिट्टी के नुकसान से प्रभावित क्षेत्रों में भोजन का उत्पादन करना।

- संयुक्त राज्य अमेरिका, सिंगापुर, नीदरलैंड और भारत जैसे देशों में सरकारों और निजी संगठनों ने सस्टेनेबल डेवलपमेंट लक्ष्यों (एसडीजी) के हिस्से के रूप में स्मार्ट एक्वापोनिक्स का समर्थन करना शुरू कर दिया है।

भविष्य की संभावनाएं

स्मार्ट एक्वापोनिक्स का भविष्य आशाजनक है। जैसे–जैसे सेंसर और डिजिटल टूल्स की लागत गिरती रहती है, अधिक लोग इस तकनीक से एक्सेस और लाभान्वित होने में सक्षम होंगे। सौर पैनलों जैसे अक्षय ऊर्जा स्रोतों के साथ एकीकरण सिस्टम को और भी अधिक टिकाऊ बना सकता है। एआई मॉडल को स्वचालित रूप से सुधार का सुझाव देने और मछली या पौधों में बीमारियों के शुरुआती संकेतों का पता लगाने के लिए विकसित किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त, मशीन लर्निंग विभिन्न फसलों और मछली प्रकारों के लिए सिस्टम को निजीकृत करने में मदद कर सकती है, जिससे वे अधिक अनुकूली हो सकते हैं। सरकारी समर्थन और सार्वजनिक जागरूकता के साथ, स्मार्ट एक्वापोनिक्स खाद्य सुरक्षा और पर्यावरण संरक्षण में एक प्रमुख भूमिका निभा सकते हैं।

निष्कर्ष

स्मार्ट एक्वापोनिक्स सतत, संसाधन–कुशल खाद्य उत्पादन के लिए एक शक्तिशाली समाधान है। आधुनिक तकनीक के साथ प्रकृति को मिलाकर, यह किसानों को कम पानी, भूमि और रसायनों के साथ स्वस्थ भोजन उगाने की अनुमति देता है। जबकि अभी भी दूर करने के लिए चुनौतियां हैं, स्मार्ट एक्वापोनिक्स के लाभ और क्षमता कृषि के भविष्य में एक महत्वपूर्ण नवाचार बनाते हैं। उचित समर्थन और शिक्षा के साथ, यह प्रणाली आने वाली पीढ़ियों के लिए खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने में मदद कर सकती है।

****

एकल–उपयोग प्लास्टिकः चुनौतियाँ, पर्यावरणीय प्रभाव और अपशिष्ट प्रबंधन समाधान

[1]मयूरी नाग, [1]कुंडु डोमा, [1]भूटिया, [1]भौतिक सावलिया, [2]तपस पॉल
[1]सी आई एफ ई (मुंबई)
[2]मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

आज सिंगल–यूज प्लास्टिक (एसयूपी) आधुनिक जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन गए हैं, मुख्य रूप से उनकी सुविधा, कम लागत और स्थायित्व के कारण। उनके व्यापक उपयोग और अनुचित निपटान ने गंभीर पर्यावरणीय चुनौतियों को जन्म दिया है। यह लेख पर्यावरण, जीवित जीवों और मानव स्वास्थ्य पर सिंगल–यूज प्लास्टिक के प्रभाव का पता लगाता है, साथ ही वैश्विक स्तर पर और भारत में अपनाई गई अपशिष्ट प्रबंधन रणनीतियों की भी जांच करता है। इसके अतिरिक्त, सिंगल–यूज प्लास्टिक के नकारात्मक प्रभावों को प्रबंधित करने और कम करने के तरीके पर सुझाव देता है।

एकल–उपयोग प्लास्टिक क्या है?

सिंगल–यूज प्लास्टिक वे वस्तुएं हैं जिनका उपयोग एक बार या थोड़े समय के लिए किया जाता है, उसके बाद उन्हें फेंक दिया जाता है। इनमें प्लास्टिक बैग, बोतलें, स्ट्रॉ, कटलरी, खाद्य पैकेजिंग और बहुत कुछ शामिल हैं। अपने हल्के वजन, किफायतीपन और व्यावहारिकता के कारण, इन प्लास्टिक का उद्योगों में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है, विशेष रूप से खाद्य और पेय पदार्थों की पैकेजिंग में। हालाँकि, उनकी सुविधा के बावजूद, उनके सामूहिक उपयोग के पर्यावरणीय परिणाम विस्तृत हैं। इसका एक उल्लेखनीय उदाहरण ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच है, जो उत्तरी प्रशांत महासागर में प्लास्टिक कचरे का एक तैरता हुआ ढेर है, जिसका आकार अनुमानित रूप से 1. 6 मिलियन वर्ग किलोमीटर है। प्लास्टिक के मलबे का यह विशाल संचय समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र पर प्लास्टिक प्रदूषण के गंभीर परिणामों को दर्शाता है। सिंगल–यूज प्लास्टिक के सबसे परेशान करने वाले पहलुओं में से एक पर्यावरण में उनका बने रहना है। प्लास्टिक, विशेष रूप से पैकेजिंग में उपयोग किए जाने वाले प्लास्टिक को विघटित होने में सैकड़ों से हजारों साल लग सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक प्लास्टिक बैग को पूरी तरह से नष्ट होने में 1000 साल तक का समय लग सकता है, जिससे मिट्टी, जलमार्ग और महासागरों में दीर्घकालिक प्रदूषण हो सकता है। जैसे–जैसे ये प्लास्टिक टूटते हैं, वे पर्यावरण में हानिकारक रसायन छोड़ते हैं, जिससे मिट्टी और पानी दूषित होते हैं। प्लास्टिक कचरे का एक बड़ा हिस्सा महासागरों में चला जाता है। अध्ययनों से पता चलता है कि प्लास्टिक कचरा समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में पाए जाने वाले सबसे आम प्रदूषकों में से एक है। प्लास्टिक, जैसे कि माइक्रोप्लास्टिक, समुद्री जीवों द्वारा निगले जाते हैं, खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करते हैं और जलीय जीवों और विस्तार से, समुद्री भोजन खाने वाले मनुष्यों के लिए गंभीर जोखिम पैदा करते हैं। प्लास्टिक कचरा समुद्री आवासों और पारिस्थितिकी तंत्रों के विघटन में भी योगदान देता है, जिससे जैव विविधता और समुद्री जीवन का संतुलन प्रभावित होता है।

प्लैंकटन से लेकर बड़ी व्हेल तक समुद्री जीव प्लास्टिक प्रदूषण के कारण खतरे में हैं। कई समुद्री जानवर प्लास्टिक के मलबे को भोजन समझ लेते हैं, जिससे वे इसे खा लेते हैं। प्लास्टिक खाने से अंदरूनी चोट, रुकावट, कुपोषण और यहां तक कि मौत भी हो सकती है। प्लास्टिक में मौजूद जहरीले रसायन पानी में भी मिल सकते हैं, जिससे समुद्री जीवन में जहर फैल सकता है और खाद्य श्रृंखला

में प्रवेश कर सकता है। प्लास्टिक प्रदूषण के स्वास्थ्य जोखिम समुद्री जीवों से कहीं आगे तक फैले हुए हैं। प्लास्टिक में मौजूद जहरीले पदार्थ, जैसे कि थैलेट्स और बिस्फेनॉल ए, जानवरों और मनुष्यों दोनों में हार्मोन को बाधित करते हैं। ये रसायन प्लास्टिक कचरे और लैंडफिल लीचेट के माध्यम से पर्यावरण में घुल सकते हैं, जिससे संभावित रूप से अंतःस्रावी व्यवधान, प्रजनन संबंधी समस्याएं और कैंसर सहित दीर्घकालिक स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं। 2019 में, फिलीपींस के एक समुद्र तट पर एक स्पर्म व्हेल को उसके पेट में 40 किलोग्राम प्लास्टिक बैग और पैकेजिंग के साथ मृत पाया गया था। प्लास्टिक द्वारा पाचन तंत्र को अवरुद्ध करने के कारण व्हेल संभवतः भूख से पीड़ित थी।

प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन की चुनौतियाँ

अपशिष्ट प्रबंधन उद्योगों के सामने दो मुख्य चुनौतियाँ हैं प्लास्टिक का बढ़ता उत्पादन और खपत तथा अकुशल रीसाइकिलिंग सिस्टम। हाल के दशकों में वैश्विक प्लास्टिक उत्पादन में तेजी से वृद्धि हुई है, 2018 में उत्पादन 359 मिलियन टन तक पहुंच गया। 1950 से 2018 तक प्लास्टिक की खपत लगभग 180 गुना बढ़ गई है और 2040 तक मांग दोगुनी होने की उम्मीद है। उत्पादन और खपत में यह उछाल प्लास्टिक कचरे के प्रभावी ढंग से प्रबंधन में एक बढ़ती हुई चुनौती पैदा करता है। जबकि प्लास्टिक रीसाइक्लिंग मौजूद है, जिस दर पर प्लास्टिक को रीसाइकिल किया जाता है वह अभी भी अपर्याप्त है। वैश्विक स्तर पर केवल लगभग 9 प्रतिशत प्लास्टिक को ही रीसाइकिल किया जाता है, बाकी या तो लैंडफिल, इन्सीनरेटर या प्राकृतिक वातावरण में समाप्त हो जाता है। प्रभावी अपशिष्ट पृथक्करणः अलगाव की कमी, रिसैक्लेबल योग्य वस्तुओं का संदूषण, तथा सीमित पुनर्चक्रण अवसंरचना इस अकुशलता में योगदान करते हैं। इसके अलावा, सभी प्लास्टिक पुनर्चक्रणीय नहीं होते, जो अपशिष्ट प्रबंधन की जटिलता को बढ़ाता है।

वैश्विक अपशिष्ट प्रबंधन दृष्टिकोण

विनियम एवं प्रतिबंध

बढ़ती प्लास्टिक अपशिष्ट समस्या के जवाब में, कई देशों ने प्लास्टिक के उपयोग पर अंकुश लगाने और बेहतर अपशिष्ट प्रबंधन को बढ़ावा देने के लिए नियम लागू किए हैं। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ ने प्लास्टिक की खपत को कम करने के लिए कानून बनाया है, कुछ एकल–उपयोग वाली प्लास्टिक वस्तुओं पर प्रतिबंध लगाया है और

पर्यावरण पर एकल–उपयोग प्लास्टिक का प्रभाव

वैकल्पिक सामग्रियों के उपयोग को प्रोत्साहित किया है। इसी तरह, कनाडा और केन्या सहित कुछ देशों ने एकल–उपयोग वाली प्लास्टिक थैलियों पर प्रतिबंध लगा दिया है।

सर्कुलर इकोनॉमी और इनोवेशन

प्लास्टिक कचरे की समस्या को हल करने के लिए एक सर्कुलर इकॉनमी की अवधारणा सामने आई है, जो अपशिष्ट में कटौती, वस्तुओं के पुनः उपयोग और उनके पुनर्चक्रण पर आधारित है। यह दृष्टिकोण निर्माताओं को पुनर्चक्रणीयता को ध्यान में रखते हुए उत्पादों को डिजाइन करने के लिए प्रोत्साहित करता है, सामग्रियों के पुनः उपयोग को

बढ़ावा देता है, और उत्पन्न होने वाले कचरे की मात्रा को कम करने का प्रयास करता है। प्लास्टिक कचरे और उसके पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक और प्लास्टिक–से–ईंधन प्रौद्योगिकियों जैसे अभिनव समाधानों की भी खोज की जा रही है। नीदरलैंड में, आयोनिका टेक्नोलॉजीज नामक एक कंपनी ने पीईटी प्लास्टिक को उनके कच्चे माल में तोड़ने की एक विधि विकसित की, जिससे गुणवत्ता में कमी के बिना अनंत पुनर्चक्रण की अनुमति मिलती है।

भारत में प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन

विश्लेषणों से पता चलता है कि भारत ने 2023–2024 में लगभग 9.3 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न किया, जो वैश्विक प्लास्टिक कचरे का लगभग 20 प्रतिशत है – जिससे यह दुनिया में अनियंत्रित प्लास्टिक प्रदूषण के सबसे बड़े उत्सर्जकों में से एक बन गया है। इस कचरे का एक बड़ा हिस्सा इकट्ठा नहीं किया जाता या उसका सही तरीके से निपटान नहीं किया जाता, जिससे प्लास्टिक प्रदूषण की समस्या और बढ़ जाती है।

भारत ने प्लास्टिक कचरे से निपटने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। 2022 में, भारत सरकार ने प्लास्टिक स्ट्रॉ, कटलरी और बैग सहित कई एकल–उपयोग वाली प्लास्टिक वस्तुओं के उत्पादन, आयात और बिक्री पर पूरे देश में प्रतिबंध लगा दिया। इसके अतिरिक्त, प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016 को प्लास्टिक कचरे को विनियमित करने, रीसाइक्लिंग को बढ़ावा देने और यह सुनिश्चित करने के लिए पेश किया गया था कि प्लास्टिक अपशिष्ट उत्पादक अपने कचरे के प्रबंधन की जिम्मेदारी लें। भारत का 'स्वच्छ भारत अभियान' प्लास्टिक प्रदूषण को कम करने के उद्देश्य से एक और पहल है। यह अपशिष्ट पृथक्करण, स्वच्छता और प्लास्टिक कचरे के उचित निपटान को बढ़ावा देने पर केंद्रित है। सरकार ने प्लास्टिक के हानिकारक प्रभावों के बारे में जनता को शिक्षित करने और जिम्मेदार उपभोग को प्रोत्साहित करने के लिए जागरूकता अभियान भी शुरू किए हैं। भारत ने विभिन्न अपशिष्ट प्रबंधन तकनीकों को अपनाया है, जैसे कि सीमेंट भट्टियों में प्लास्टिक कचरे का सह–प्रसंस्करण। यह पर्यावरण–अनुकूल विधि प्लास्टिक कचरे के निपटान के साथ–साथ ऊर्जा की आपूर्ति भी करती है। हालाँकि रीसाइक्लिंग दरों में सुधार हुआ है, लेकिन प्लास्टिक कचरे की बढ़ती मात्रा को संभालने और इसके उचित निपटान को सुनिश्चित करने में चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण से निपटने के लिए भारत सरकार की प्रमुख पहल

मछलियों पर एकल उपयोग प्लास्टिक का प्रभाव

2020 और 2030 के बीच, जलीय क्षेत्रों में प्रवेश करने वाले प्लास्टिक की मात्रा में सालाना तीन गुना वृद्धि होने की उम्मीद है। छोटे प्लास्टिक कण जलीय खाद्य श्रृंखलाओं में प्रवेश करने की अपनी क्षमता और जीवों के लिए उत्पन्न होने वाले खतरों के कारण एक बढ़ती हुई पर्यावरणीय समस्या बनते जा रहे हैं। मछलियों की आंत में प्लास्टिक के रेशे पाए गए हैं, जो तटीय वातावरण में विशेष रूप से आम हैं। इससे पता चलता है कि पारंपरिक मछली पकड़ने की तकनीकों का मछलियों की आबादी पर प्रभाव पड़ता है। महासागरों में पाए जाने वाले ज्यादातर प्लास्टिक मछली पकड़ने के जाल और उपकरण, प्लास्टिक की थैलियाँ और प्लास्टिक की

बोतलें हैं। मछली पकड़ने के उपकरण गैर–जिम्मेदार मछुआरों द्वारा फेंक दिए जाते हैं, या खो दिए जाते हैं। मनोरंजन के लिए मछली पकड़ने में इस्तेमाल होने वाले नरम प्लास्टिक के हुक (रिगिंग के आधार पर) आसानी से मछुआरों के हुक से निकल सकते हैं। ये पदार्थ पर्यावरण से पूरी तरह गायब नहीं होते, बल्कि प्रकाश, ऊष्मा, पराबैंगनी विकिरण, यांत्रिक घर्षण और समुद्री धाराओं की क्रिया से छोटे–छोटे टुकड़ों में टूट जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप नैनोप्लास्टिक, माइक्रोप्लास्टिक और मेसोप्लास्टिक बनते हैं। इन्हें मछलियाँ या तो तुरंत निगल सकती हैं ये तल पर जमा हो जाते हैं जहाँ अन्य मछलियाँ भोजन की तलाश में होती हैं। मछलियों द्वारा निगले जाने पर, ये एक अपचय या अपघटन न होने वाली बाहरी वस्तु के रूप में काम कर सकते हैं जो की मृत्यु का कारण बनते हैं ।

दूसरी ओर, पॉलिमर के आधार पर, खाद्य पैकेजिंग के लिए प्लास्टिक का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। पॉलीइथाइलीन, पॉलीयूरेथेन, और विस्तारित पॉलीस्टाइरीन जैसे पॉलिमर, ताजी मछली जैसे खाद्य पदार्थों की पैकेजिंग और परिवहन के लिए व्यापक रूप से उपयोग किए जाते हैं। आज तक, खाद्य पदार्थों के परिवहन में उपयोग किए जाने वाले अधिकांश प्लास्टिक एकल–उपयोग वाले होते हैं और इनका जीवनकाल कम होता है। महासागरों में, मछलियाँ प्लास्टिक समुद्री प्रदूषकों से अत्यधिक प्रभावित होती हैं। समुद्री प्रदूषकों के अंतर्ग्रहण से सबसे अधिक प्रभावित होने वाले समूह शार्क और रे मछलियाँ हैं, लेकिन बोनी मछलियाँ भी संकटग्रस्त हैं। समुद्री मछली प्रजातियाँ, अकशेरुकी (इन्वेर्टेब्रेटस), पक्षी और समुद्री स्तनधारी अक्सर माइक्रोप्लास्टिक को भोजन समझ लेते हैं। दुनिया भर के विभिन्न स्थानों पर हुए कई अध्ययनों में माइक्रोप्लास्टिक के अंतर्ग्रहण के प्रमाण मिले हैं। माइक्रोप्लास्टिक के अंतर्ग्रहण से जलीय जीवों को रासायनिक और शारीरिक दोनों तरह के नुकसान हो सकते हैं। इसके शारीरिक प्रभावों में गतिशीलता में बाधा, पाचन तंत्र में रुकावट, भूख न लगना, पाचन तंत्र में आंतरिक रुकावट या क्षति शामिल है। जलीय जीवों के आंत माइक्रोबायोम विषाक्तता के लिए अतिसंवेदनशील होते हैं। इन रासायनिक प्रभावों में जीवों पर कैंसरकारी, टेराटोजेनिक और म्यूटाजेनिक प्रभाव शामिल हैं। अध्ययनों से पता चला है कि ये अत्यधिक सूजन, जीनोटॉक्सिसिटी और ऑक्सीडेटिव तनाव पैदा करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप कोशिकाओं और ऊतकों को नुकसान पहुँचता है।

प्लास्टिक कचरे के प्रबंधन के लिए सुझाव

- **टिकाऊ विकल्पों के उपयोग को बढ़ावा देना:** बायोडिग्रेडेबल सामग्रियों, पुनरू प्रयोज्य बैग और एकल–उपयोग प्लास्टिक के अन्य टिकाऊ विकल्पों को अपनाने से प्लास्टिक कचरे के उत्पादन में काफी कमी आ सकती है। सरकारों और व्यवसायों को पर्यावरण के अनुकूल उत्पादों के विकास और उपयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए।

- **पुनर्चक्रण अवसंरचना में सुधार:** प्लास्टिक कचरे के प्रभावी प्रबंधन के लिए पुनर्चक्रण सुविधाओं का विस्तार और उन्नयन आवश्यक है। सरकारों को कचरा पृथक्करण कार्यक्रमों में निवेश करना चाहिए, संग्रह प्रणालियों को बेहतर बनाना चाहिए और पुनर्चक्रित प्लास्टिक के लिए बाजार बनाना चाहिए।

- **जन जागरूकता अभियान:** लास्टिक प्रदूषण के खतरों और कचरे को अलग–अलग करने के महत्व के बारे में लोगों को शिक्षित करना बहुत जरूरी है। जागरूकता अभियान उपभोक्ताओं को ज्यादा टिकाऊ विकल्प चुनने और सिंगल–यूज प्लास्टिक पर निर्भरता कम करने के लिए सशक्त बना सकते हैं।

- **मजबूत कानून और प्रवर्तन:** सरकारों को प्लास्टिक उत्पादन, उपयोग और निपटान पर सख्त नियम लागू करने चाहिए। प्लास्टिक पर प्रतिबंध लगाने और लागू करने, कूड़ा फेंकने पर जुर्माना लगाने और अपशिष्ट प्रबंधन के लिए

उद्योगों को जवाबदेह बनाने से प्लास्टिक प्रदूषण को रोकने में मदद मिलेगी।

- **बायोप्लास्टिक और अपशिष्ट से ऊर्जा प्रौद्योगिकी में नवाचारः** बायोप्लास्टिक्स और कचरे को उपयोगी बनाने वाली प्रौद्योगिकियों के अनुसंधान में निवेश करने से दीर्घावधि में प्लास्टिक कचरे की समस्या का समाधान करने में मदद मिलेगी। नवीकरणीय स्रोतों से बने बायोप्लास्टिक कई अनुप्रयोगों में पारंपरिक प्लास्टिक की जगह ले सकते हैं, जबकि अपशिष्ट से ऊर्जा प्रौद्योगिकी प्लास्टिक निपटान के लिए टिकाऊ विकल्प प्रदान कर सकती है।

निष्कर्ष

एकल–उपयोग प्लास्टिक एक गंभीर पर्यावरणीय चुनौती है, जो पारिस्थितिकी तंत्र, मानव स्वास्थ्य और दुनिया भर में रहने वाले जीवों को प्रभावित करती है। जबकि प्लास्टिक कचरे को कम या खतम करने और प्रबंधित करने के लिए वैश्विक और राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास चल रहे हैं। टिकाऊ विकल्पों को बढ़ावा देकर, रीसाइक्लिंग बुनियादी ढांचे में सुधार करके और सख्त कानून लागू करके, समाज प्लास्टिक प्रदूषण के प्रभाव को कम कर सकता है। एकल–उपयोग प्लास्टिक के कारण उत्पन्न बढ़ती पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए, सर्कुलर इकॉनमी को अपनाना बहुत महत्वपूर्ण होगा, जहां प्लास्टिक कचरे को न्यूनतम रखा जाएगा और उसका पुनः उपयोग किया जाएगा। सामूहिक कार्रवाई और नवाचार के माध्यम से, हम भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक स्वच्छ, स्वस्थ ग्रह सुनिश्चित कर सकते हैं।

****

एक्वामिमिक्री प्रणाली: झींगा पालन के लिए एक प्रभावी उपाय

[1]आर्या सिंह, [2]विवेक चौहान, [1]शशांक सिंह, [1]ज्योति सरोज
[1]आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय , (उत्तर प्रदेश)
[2]केरल मत्स्य एवं महासागरीय अध्ययन विश्वविद्यालय, (कोच्चि)

जलीय जीवों की खेती (एक्वाकल्चर) आज दुनिया के कई देशों में एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि बन चुकी है, जो न केवल खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है, बल्कि लाखों लोगों को आजीविका का साधन भी प्रदान करती है। एक्वाकल्चर और कैप्चर फिशरीज मिलकर विदेशी मुद्रा अर्जन में भी प्रमुख भूमिका निभाते हैं। विश्व मत्स्य पालन और जलकृषि की स्थिति की 2024 की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2022 में वैश्विक मत्स्य पालन और जलकृषि उत्पादन बढ़कर 223.2 मिलियन टन हो गया, जो वर्ष 2020 की तुलना में 4.4 प्रतिशत की वृद्धि है। हाल के वर्षों में झींगा पालन जैसे क्षेत्रों में तीव्र उत्पादन के प्रयासों के कारण अत्यधिक अपशिष्ट उत्पन्न हो रहा है। अधिक स्टॉकिंग घनत्व अपनाने और एंटीबायोटिक्स (प्रतिजैविकों) व रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से जल गुणवत्ता में गिरावट, रोगों का फैलाव और पर्यावरणीय असंतुलन जैसी समस्याएं उत्पन्न हुई हैं। एशियाई देशों में यह स्थिति अधिक गंभीर है, जहाँ झींगा उद्योग एक संगठित रूप में स्थापित है।

ऐसे परिदृश्य में एक ऐसी तकनीक की आवश्यकता है जो पर्यावरण की रक्षा करते हुए टिकाऊ और लाभकारी उत्पादन सुनिश्चित करे। ऐसी ही एक नवाचारी और हरित तकनीक है एक्वामिमिक्री। यह तकनीक प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र की नकल करते हुए, विशेष रूप से झींगा पालन के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ तैयार करती है। इसमें प्राणिप्लवकों (सूक्ष्म जलचर जीव) की अत्यधिक वृद्धि की स्थिति विकसित की जाती है, जो झींगों को पूरक पोषण प्रदान करते हैं और साथ ही जल में लाभकारी जीवाणुओं की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं। इससे जल की गुणवत्ता संतुलित बनी रहती है और उत्पादन प्राकृतिक तालाब जैसे पर्यावरण में होता है।

एक्वामिमिक्री तकनीक में चावल की भूसी जैसे प्राकृतिक कार्बन स्रोत, प्रोबायोटिक्स (हितकारी जीवाणु) आदि मिलाकर प्राणिप्लवक तथा पादपप्लवक की वृद्धि की स्थिति का विकास किया जाता है। यह प्रक्रिया पारंपरिक तालाब की तरह पोषक तत्व प्रदान करती है, जिससे मछली और झींगा को अतिरिक्त आहार मिलता है और साथ ही जल की गुणवत्ता भी बनी रहती है।

यह तकनीक स्वपोषी अवस्था (जहाँ पादप और शैवाल जैसे जीव मुख्य भूमिका निभाते हैं) की तुलना में परपोषी अवस्था (जहाँ जीवाणु और अन्य सूक्ष्मजीव प्रमुख होते हैं) को प्रोत्साहित करती है, जिससे उत्पादन प्रणाली अधिक स्थिर और प्राकृतिक बनती है।

एक्वामिमिक्री प्रणाली क्या है?

एक्वामिमिक्री एक नई और प्राकृतिक तकनीक है, जिसे 2013 में थाईलैंड के दो झींगा किसानों – सुटी प्रसर्टमार्क और वीरासन प्रयोटामोर्नकुल ने विकसित किया था। इस तकनीक का उद्देश्य झींगा पालन को प्राकृतिक जल – जैसे वातावरण में बदलकर इसे अधिक सुरक्षित, सतत और लाभदायक बनाना है।

इस पद्धति में तालाब में प्राकृतिक झींगा पालन की स्थिति तैयार की जाती है। इसके लिए तालाब में सूक्ष्म जीव को बढ़ाया जाता है, जो झींगों को प्राकृतिक पोषण देते हैं। साथ ही, तालाब में प्रोबायोटिक्स (फायदेमंद बैक्टीरिया) डाले जाते हैं, जिससे पानी की गुणवत्ता बनी रहती है और बीमारियाँ नहीं फैलतीं।

इस तकनीक में चावल की भूसी, गेहूं या सोयाबीन जैसे सस्ते और प्राकृतिक कार्बन स्रोतों का उपयोग किया जाता है। जब इन्हें प्रोबायोटिक्स के साथ मिलाया जाता है, तो तालाब में पोषक जीवों की संख्या बढ़ती है। ये जीव झींगों की तेज वृद्धि, अच्छी सेहत और बेहतर रोग प्रतिरोधक क्षमता में मदद करते हैं।

एक्वामिमिक्री में पानी की सफाई अपने आप होती रहती है क्योंकि इसमें नाइट्रोजन जैसे अपशिष्ट तत्व भी प्राकृतिक रूप से उपयोग हो जाते हैं। इससे रासायनिक दवाओं और एंटीबायोटिक्स की जरूरत कम होती है और पर्यावरण पर कोई बुरा असर नहीं पड़ता।

कुल मिलाकर, एक्वामिमिक्री एक सरल, सस्ता और पर्यावरण के अनुकूल तरीका है जो झींगा पालन को ज्यादा लाभदायक और टिकाऊ बनाता है।

एक्वामिमिक्री के प्रमुख सिद्धांत

1 **प्रकृति की नकल:** प्रणाली प्राकृतिक तटीय पारिस्थितिक तंत्रों की नकल करती है जहां झींगा और मछली स्वाभाविक रूप से बढ़ती हैं।

2 **प्लैंकटन–आधारित पालन:** जूप्लांकटन और फाइटोप्लांकटन को विकसित करने के लिए किण्वित कार्बन स्रोतों (जैसे चावल की चोकर, गुड़) का उपयोग करता है, जो प्राकृतिक भोजन के रूप में काम करते हैं।

3. **बायोफ्लोक और प्रोबायोटिक एकीकरण:** जल की गुणवत्ता बनाए रखने और रोगाणुओं को कम करने के लिए बायोफ्लोक तकनीक को लाभकारी सूक्ष्मजीवों के साथ संयोजित करता है।

4. **कम या बिल्कुल भी रसायनों का उपयोग नहीं:** एंटीबायोटिक दवाओं और कठोर रसायनों से बचाव, टिकाऊ और पर्यावरण–अनुकूल खेती को बढ़ावा देता है।

5. **जल गुणवत्ता प्रबंधन:** सूक्ष्मजीवी क्रिया के माध्यम से कम अमोनिया और नाइट्राइट के साथ एक स्थिर वातावरण बनाए रखता है।

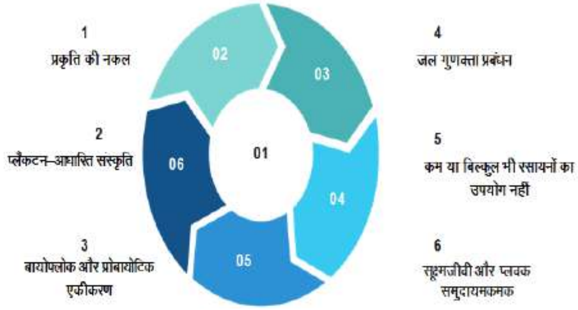

एक्वामिमिक्री के प्रमुख सिद्धांत

बायोफ्लॉक तकनीक और एक्वामिमिक्री प्रणाली: समानताएँ और अंतर

बायोफ्लॉक तकनीक और एक्वामिमिक्री प्रणाली दोनों ही जलीय कृषि में तेजी से लोकप्रिय हो रही हैं और इनमें कुछ समानताएँ होने के साथ–साथ महत्वपूर्ण अंतर भी हैं।

समानताएँ –

- ✓ **कार्बन स्रोत का उपयोग** – दोनों तकनीकों में बाहरी कार्बन स्रोतों को शामिल किया जाता है। ये स्रोत मुख्य रूप से गुड़, ग्लिसरीन, चावल, गेहूं, मक्का जैसे सस्ते कृषि उत्पाद होते हैं।
- ✓ **जल गुणवत्ता सुधार** – दोनों प्रणालियों में लाभकारी बैक्टीरिया के विकास को बढ़ावा देकर जल को शुद्ध रखने की कोशिश की जाती है।
- ✓ **फ्लॉक या प्राकृतिक भोजन का निर्माण** – दोनों पद्धतियाँ ऐसे सूक्ष्मजीवों का निर्माण करती हैं जो झींगा के लिए पूरक आहार का कार्य करते हैं, जिससे कृत्रिम आहार पर निर्भरता और लागत कम होती है।

अंतर –

- ✓ **कार्बन–नाइट्रोजन अनुपात की भूमिका**
  - ○ बायोफ्लॉक में कार्बन–नाइट्रोजन अनुपात बनाए रखना बहुत जरूरी होता है (आमतौर पर 15:1)। इसका उद्देश्य

परपोषी बैक्टीरिया को सक्रिय कर फ्लॉक बनाना होता है।

- एक्वामिमिक्री में कार्बन–नाइट्रोजन अनुपात का कोई विशेष महत्व नहीं है यह पानी के गंदेपन पर आधारित होता है।

✓ **झींगा आहार में प्राणिप्लवकों की भूमिका**

- एक्वामिमिक्री में प्राणिप्लवकों विशेषकर कोपेपोड्स का बहुत अहम योगदान होता है, जो झींगों के लिए प्राकृतिक और पोषक आहार प्रदान करते हैं।
- जबकि बायोफ्लॉक में इनकी भूमिका सीमित होती है।

✓ **कार्बन स्रोत का स्वरूप**

- बायोफ्लॉक में सामान्य कार्बन स्रोतों का उपयोग किया जाता है।
- एक्वामिमिक्री में किण्वित कार्बन स्रोत जैसे चावल की भूसी को प्रोबायोटिक्स के साथ मिलाकर डाला जाता है, जो जल में अच्छे बैक्टीरिया और प्लवकों को बढ़ाता है।

✓ **पानी की स्थिरता और पीएच नियंत्रण**

- एक्वामिमिक्री प्रणाली में प्राणीय प्लवक (ये सूक्ष्म जीव होते हैं, जो वनस्पतीय प्लवक या अन्य सूक्ष्म जीवों को खाकर जीवित रहते हैं) और वनस्पतीय प्लवक (ये सूक्ष्म वनस्पति होते हैं, जैसे – शैवाल, जो प्रकाश–संश्लेषण द्वारा ऊर्जा प्राप्त करते हैं) के संतुलन को बनाए रखने से पीएच और घुले हुए ऑक्सीजन के उतार–चढ़ाव कम होते हैं, जिससे रासायनिक दवाओं की जरूरत घट जाती है।
- बायोफ्लॉक में इन बदलावों को संभालने के लिए अनुभव और निगरानी की अधिक आवश्यकता होती है।

एक्वामिमिक्री पद्धति अपनाकर पालन करने की प्रक्रिया

एक्वामिमिक्री पद्धति को अपनाने के लिए सबसे पहले किण्वित चावल की भूसी तैयार की जाती है। इसके लिए बारीक पिसी हुई चावल की भूसी में पानी, प्रोबायोटिक्स और हाइड्रोलाइजिंग (जलअपघटनी) एंजाइम मिलाए जाते हैं और इस मिश्रण को लगभग 24 घंटे तक किण्वन (फर्मेंटेशन) किया जाता है। चावल की भूसी यहाँ प्रीबायोटिक के रूप में कार्य करती है और प्रोबायोटिक बैक्टीरिया के साथ मिलकर एक सहजीवी प्रभाव उत्पन्न करती है।

तैयार किण्वित चावल की भूसी को 500–1000 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से तालाब में डाला जाता है। डालने के लगभग एक सप्ताह के अंदर तालाब में कोपेपॉड (एक प्रकार का जीवित प्राकृतिक चारा) की भरपूर वृद्धि हो जाती है, जिससे बीज (मछली बीज संचयन) स्टॉक करने से पहले ही उनके लिए प्राकृतिक आहार उपलब्ध हो जाता है– वह भी किसी भी हानिकारक रसायन का प्रयोग किए बिना।

यह विधि अत्यंत प्रभावी, पर्यावरण अनुकूल तथा स्थायी उत्पादन की दिशा में एक बेहतर विकल्प है। बीजों को कम घनत्व (10–20 पोस्ट लार्वा प्रति वर्ग मीटर) पर स्टॉक किया जाता है। ग्रोआउट (पालन अवधि) के दौरान किण्वित चावल की भूसी को समय–समय पर तालाब में डालना होता है ताकि कोपेपॉड की संख्या बनी रहे, और इसकी मात्रा तालाब के गंदेपन के स्तर पर निर्भर करती है।

एक्वामिमिक्री प्रणाली को गहन पालन में भी अपनाया जा सकता है। इसमें ग्रोआउट तालाब से पानी केंद्रीय ड्रेनेज सिस्टम द्वारा सेडिमेंटेशन तालाबों में भेजा जाता है। इन तालाबों में नमक की मात्रा के अनुसार कैटफिश या मिल्कफिश जैसे मछलियों का पालन किया जा सकता है। ये मछलियाँ तलछट को ऊपर उठाती हैं जिससे ओलिगोकेट कीड़े का विकास होता है, जिन्हें मछलियाँ खा लेती हैं।

सेडिमेंटेशन तालाब से पानी बायोफिल्टर तालाब में जाता है, जहाँ तिलापिया जैसी मछलियाँ पाली जाती हैं। इस प्रक्रिया से पानी में मौजूद कचरे और अपशिष्टों को कम किया जाता है और इसे दोबारा ग्रोआउट तालाब में पंप करके प्रयोग किया जा सकता है। यह वही एक्वामिमिक्री तकनीक है जो थाईलैंड में झींगा पालन के लिए अपनाई जाती है।

एक्वामिमिक्री प्रणाली के लाभ

झींगा पालन में एक्वामिमिक्री प्रणाली अपनाने से कई फायदे होते हैं, जैसे–

- **पालन प्रणाली अधिक स्थिर रहती है–** पारंपरिक प्रणालियों की तुलना में यह अधिक संतुलित और टिकाऊ होती है।
- **झींगे अधिक स्वस्थ रहते हैं–** प्रोबायोटिक में पाए जाने वाले तत्व जैसे लिपोपॉलीसेकेराइड्स और पेप्टाइडोग्लाइकन झींगों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं।
- **फीड कन्वर्जन रेशियो बेहतर होता है–** तालाब में प्राकृतिक रूप से प्राणिप्लवकों विशेष रूप से कोपेपॉड की अधिकता रहती है जिससे आहार का अधिकतम उपयोग होता है।
- **बीमारियों की संभावना कम होती है–** क्योंकि वातावरण प्राकृतिक और झींगों के अनुकूल होता है जिससे तनाव भी कम होता है।
- **कम लागत वाली अर्ध–गहन और बड़े स्तर की पालन प्रणाली में उपयोगी–** इससे पानी की अदला–बदली और कृत्रिम आहार की आवश्यकता घटती है।
- **प्राकृतिक जीवित आहार से पोषण में सुधार होता है–** झींगे तेजी से और स्वस्थ तरीके से बढ़ते हैं।
- **पानी की अदला–बदली सीमित होने से जैव–सुरक्षा बढ़ती है–** जिससे झींगे कम तनाव में रहते हैं।
- **हानिकारक बैक्टीरिया के फैलाव पर नियंत्रण–** साथ ही काले कीचड़ बनने की संभावना भी कम हो जाती है।
- **उत्पादन लागत कम और लाभ ज्यादा–** चूंकि व्यर्थ ठोस पदार्थ और अपशिष्ट कम बनते हैं, ऑक्सीजन की मांग और ऊर्जा की खपत भी घटती है।
- **प्राकृतिक वातावरण का अनुकरण करने से बेहतर वृद्धि दर मिलती है–** जिससे उत्पादन अधिक होता है।
- **तकनीकी जानकारी या महंगे उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती–** छोटे किसान भी इस पद्धति को आसानी से अपना सकते हैं।

एक्वामिमिक्री प्रणाली की सीमाएँ (हानियाँ)

- इस तकनीक को इनडोर या बंद प्रणाली में लागू करना कठिन है।
- इसे लागू करने के लिए बड़े उपचार तालाब की जरूरत होती है।
- नए प्रकार के रोगजनकों के उभरने की संभावना हो सकती है।

निष्कर्ष

एक्वामिमिक्री तकनीक को झींगा पालन में अपनाना पारंपरिक तरीकों की तुलना में अधिक सतत और लाभकारी है। इस प्रणाली में कोई हानिकारक रसायन या एंटीबायोटिक का उपयोग नहीं होता, जिससे यह न केवल झींगों बल्कि मानव स्वास्थ्य के लिए भी सुरक्षित है।

इस तकनीक से उत्पादन लागत में कमी आती है और झींगों की स्वाभाविक वृद्धि को बढ़ावा मिलता है। यह पर्यावरण के अनुकूल होने के साथ–साथ किसानों को आर्थिक रूप से भी लाभ देती है।

एक्वामिमिक्री प्रणाली वास्तव में जलवायु और प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र की नकल करते हुए ऐसा वातावरण बनाती है, जहाँ झींगे के लिए जीवित आहार स्वत: उत्पन्न होता है। इस प्रक्रिया में पाले गए झींगे आमतौर पर लाल रंग के होते हैं, जो उनमें पाए जाने वाले एस्टैक्सैन्थिन, अमीनो अम्ल और पॉली–अनसैचुरेटेड फैटी एसिड्स की वजह से

होता है। यही रंग इन्हें बाजार में "ऑर्गेनिक झींगा" के रूप में अधिक मूल्यवान बनाता है।

ऑर्गेनिक झींगा पालन का अर्थ है कि किसान प्राकृतिक और जैविक मानकों के अनुसार उत्पादन करते हैं, जो पर्यावरण की रक्षा, पारिस्थितिकी तंत्र की विविधता को बनाए रखने और टिकाऊ जलीय कृषि को बढ़ावा देता है।

इस प्रकार, एक्वामिमिक्री एक क्रांतिकारी तरीका है जो झींगा पालन उद्योग को सुरक्षित, टिकाऊ और लाभकारी दिशा में ले जाने में सक्षम है।

****

सतत मत्स्यपालनः आर्थिक समृद्धि और पर्यावरण संतुलन की दिशा में बढ़ता कदम

[1]नीलेश कुमार [2]चन्द्र पाल सिंह [1]किशन सिंह [3]संगीता कुमारी
[1]मात्स्यिकी महाविद्यालय, दतिया (मध्य प्रदेश)
[2]मात्स्यिकी महाविद्यालय, (अयोध्या)
[3]मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

भारत, अपनी विशाल तटरेखा और समृद्ध अंतर्देशीय जल संसाधनों के साथ, मत्स्यपालन के क्षेत्र में विश्व में दूसरे सबसे बड़े उत्पादक के रूप में उभरा है। यह क्षेत्र करोड़ों लोगों की आजीविका का आधार है और देश की खाद्य सुरक्षा और पोषण में महत्वपूर्ण योगदान देता है। हालाँकि, इस महत्वपूर्ण क्षेत्र का दीर्घकालिक विकास सुनिश्चित करने के लिए, सतत मत्स्यपालन को अपनाना अनिवार्य हो गया है। यह न केवल आर्थिक समृद्धि को बढ़ावा देता है, बल्कि हमारे पर्यावरण के नाजुक संतुलन को भी बनाए रखता है। परंपरागत मत्स्यपालन पद्धतियाँ, जैसे कि अत्यधिक मछली पकड़ना और विनाशकारी जालों का उपयोग, समुद्री और ताजे पानी के पारिस्थितिक तंत्र को गंभीर नुकसान पहुंचा रहे हैं। इससे मछली के जनसंख्या में कमी आ रही है, जैव विविधता खतरे में पड़ रही है और मछुआरों की आजीविका भी प्रभावित हो रही है। जलवायु परिवर्तन भी मछलियों के वितरण, प्रवास और प्रजनन चक्र को प्रभावित कर रहा है, जिससे चुनौतियाँ और बढ़ रही हैं। सतत मत्स्यपालन एक ऐसा दृष्टिकोण है जो वर्तमान पीढ़ी की जरूरतों को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों को संरक्षित करता है। यह पारिस्थितिक रूप से जिम्मेदार, सामाजिक रूप से न्यायसंगत और आर्थिक रूप से व्यवहार्य मत्स्यपालन तकनीकियों पर जोर देता है।

सतत मत्स्यपालन की दिशा में बढ़ते कदम

भारत सरकार ने सतत मत्स्यपालन को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण पहल की हैं। प्रधानमंत्री मत्स्य सम्पदा योजना जैसी प्रमुख योजनाएं इस दिशा में एक बड़ा कदम हैं, जिसमें टिकाऊ जलीय कृषि, गहरे समुद्र में मछली पकड़ना और पोस्ट–हार्वेस्ट प्रबंधन शामिल है। इसके तहत गुणवत्तापूर्ण बीज आपूर्ति, आधुनिक तकनीकों जैसे आरएएस, बायोफ्लॉक और केज कल्चर को बढ़ावा दिया जा रहा है। महिलाओं और अनुसूचित जाति, जनजाति के लाभार्थियों को 60 प्रतिशत तक की सब्सिडी प्रदान की जा रही है, जो इस क्षेत्र में समावेशी विकास को बढ़ावा देती है।

सतत मत्स्यपालन के तरीके

सतत मत्स्यपालन एक व्यापक अवधारणा है जिसमें विभिन्न प्रकार की तकनीकियाँ शामिल हैं, जिनका उद्देश्य मछली स्टॉक और जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को बनाए रखते हुए मत्स्य संसाधनों का उपयोग करना है। इन्हें मुख्य रूप से दो व्यापक श्रेणियों में बांटा जा सकता है:

1ण **अंतर्देशीय जलीय कृषि में सतत प्रथाएँ: यह** अंतर्देशीयध इनलैंड पानी के स्रोतों जैसे तालाबों, झीलों, नदियों और खारे पानी में मछली पालन से संबंधित है। इसमें टिकाऊपन सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित विधियाँ अपनाई जाती हैं:

- **पारिस्थितिक जलीय कृषिः** यह प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के साथ सद्भाव में काम करता है, रसायनों और एंटीबायोटिक दवाओं के उपयोग को कम करता है।
- **पुनर्संचारी जलीय कृषि प्रणालीः** यह बंद लूप प्रणाली है जो पानी को रीसायकल करती है, जिससे पानी का उपयोग कम होता है और

प्रदूषण नियंत्रित होता है। यह भूमि और पानी की कमी वाले क्षेत्रों के लिए आदर्श है।

- **बायोफ्लॉक तकनीकः** यह एक ऐसी प्रणाली है जहाँ सूक्ष्मजीवों (बायोफ्लॉक) को टैंकों में पाला जाता है जो मछली के अपशिष्ट उत्पादों को पोषक तत्वों में परिवर्तित करते हैं, जिन्हें मछली स्वयं भोजन के रूप में उपयोग कर सकती है। यह पानी के खर्च को कम करता है और फीड दक्षता बढ़ाता है।
- **एकीकृत मत्स्यपालनः** एकीकृत मत्स्यपालन में मुख्यतः कृषि–मत्स्यपालन एवं पशुधन–मत्स्यपालन किया जाता है। कृषि–मत्स्यपालन में ज्यादातर चावल–मछली पालन प्रणाली जहाँ चावल के खेतों में मछली पाली जाती है, जिससे दोनों का सह–उत्पादन होता है और उर्वरकों का कुशल उपयोग होता है। दूसरी तरफ पशुधन–मत्स्यपालन में जैसे मुर्गी, बत्तख, सुअर के अपशिष्ट का उपयोग मछली तालाबों को उर्वरित करने के लिए किया जाता है, जिससे फीड की लागत कम होती है और अपशिष्ट का प्रबंधन होता है।
- **कम पानी में अधिक उत्पादनः** ऐसे सिस्टम जो कम पानी और कम जगह का उपयोग करके उच्च उत्पादन देते हैं, लेकिन साथ ही पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव को कम करते हैं।
- **गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादनः** बीमारियों से मुक्त और तेजी से बढ़ने वाले मछली बीज का उत्पादन ताकि उच्च मृत्यु दर से बचा जा सके और कम समय में बेहतर उत्पादन मिल सके।
- **प्रजाति का विवेकपूर्ण चयनः** स्थानीय और देशी प्रजातियों को प्राथमिकता देना जो स्थानीय पर्यावरण के अनुकूल हों और आक्रामक प्रजातियों के प्रवेश से बचना।
- **समुदाय आधारित प्रबंधनः** स्थानीय समुदायों को मत्स्य संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में शामिल करना, जिससे उनकी भागीदारी और स्वामित्व बढ़ता है।

2ए **समुद्री मत्स्यपालन में सतत प्रथाएँः** यह खुले महासागरों और तटीय क्षेत्रों में मछली पकड़ने से संबंधित है। इसमें भी टिकाऊपन सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित विधियाँ अपनाई जाती हैं:

- **कोटा और कैच सीमाएँः** सरकारें एक निश्चित अवधि में पकड़ी जा सकने वाली मछलियों की कुल मात्रा निर्धारित करते हैं। यह सुनिश्चित करता है कि मछली स्टॉक को अपनी आबादी को फिर से भरने का मौका मिले।
- **मौसम–वार प्रतिबंधः** प्रजनन काल के दौरान मछली पकड़ने पर प्रतिबंध लगाया जाता है ताकि मछली को अंडे देने और अपनी संख्या बढ़ाने का अवसर मिल सके। भारत में मानसून के दौरान (जैसे बिहार में जून से अगस्त) मछली पकड़ने पर एक समान प्रतिबंध इसका एक प्रमुख उदाहरण है।
- **गियर का विनियमनः** इसके अंतर्गत मुख्यतः गियर को ध्यान में रखते हुए मछली पकड़ने का सुझाव दिया जाता है जैसेरू आकार के हिसाब से गियर का चयन, ऐसे जाल और उपकरण का उपयोग जो केवल परिपक्व मछलियों को पकड़ें और छोटी या युवा मछलियों को बच निकलने दें, ताकि वे प्रजनन कर सकें। निचले भाग को नुकसान न पहुँचाने वाले गियर, इसमें समुद्री तल को नुकसान पहुँचाने वाले ट्रॉलिंग जैसे तरीकों को बढ़ावा नहीं दिया जाता है और कम प्रभाव वाले गियर को बढ़ावा दिया जाता है, और ऐसे जाल जो समुद्र में खो जाते हैं और मछली के लिए खतरा बनते हैं , उन्हें कम करने या पुनर्चक्रण करने के प्रयास किए जाते हैं।
- **संरक्षित क्षेत्रः** कुछ समुद्री क्षेत्रों को नो–फिशिंग जोन या समुद्री संरक्षित क्षेत्रों के रूप में नामित किया जाता है, जहाँ मछली पकड़ने की अनुमति नहीं होती है। ये क्षेत्र मछली के

प्रजनन और उनके आवासों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

- **प्रजाति विविधीकरणः** कुछ विशिष्ट प्रजातियों पर अत्यधिक दबाव को कम करने के लिए विभिन्न प्रजातियों को चिन्हित करने का प्रोत्साहित दिया जाता है।
- **कृत्रिम रीफः** समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को बेहतर बनाने और मछली के लिए आवास प्रदान करने के लिए कृत्रिम रीफ स्थापित करना।
- **समुद्री कृषिः** समुद्री वातावरण में शल्क वाली और बिना शल्क वाली मछली की खेती करना, जिसमें केज कल्चर, सीप पालन, सीवीड फार्मिंग आदि आते हैं।

सतत मत्स्यपालन में चुनौतियाँ

- **जागरूकता की कमीः** मत्स्यपालन में जागरूकता की कमी एक बड़ी चुनौती है। इससे किसान आधुनिक तकनीकों, सरकारी योजनाओं और टिकाऊ प्रथाओं से अनभिज्ञ रहते हैं। परिणामस्वरूप, उन्हें कम पैदावार झेलनी पड़ती हैं। सही जानकारी के अभाव में वे अपने व्यवसाय को कुशलता से नहीं चला पाते।
- **आधारभूत संरचनाः** अपर्याप्त कोल्ड चेन, प्रसंस्करण इकाइयां और बाजार तक पहुंच अभी भी बड़ी बाधाएं हैं।
- **वित्तीय सहायताः** छोटे पैमाने के मछुआरों के लिए पर्याप्त और सुलभ वित्तीय सहायता सुनिश्चित करना आवश्यक है। वित्तीय सहायता की कमी के कारण मत्स्यपालक अक्सर अपनी आय को बढ़ाने के लिए आवश्यक निवेश नहीं कर पाते हैं। उन्हें उन्नत उपकरणों, गुणवत्ता वाले बीजों और आधुनिक तकनीकों को खरीदने में कठिनाई होती है, जिससे उनका व्यवसाय सीमित रह जाता है।
- **अवैध, असूचित और अनियमित मछली पकड़नाः** जागरूकता की कमी के कारण अवैध, असूचित और अनियमित मछली पकड़ना एक बड़ी समस्या है। मछुआरों को अक्सर नियमों और टिकाऊ प्रथाओं के बारे में जानकारी नहीं होती, जिससे वे गैर–कानूनी तरीकों का इस्तेमाल करते हैं। इससे समुद्री पर्यावरण को नुकसान पहुँचता है और मछली भंडार पर दबाव बढ़ता है, जिससे भविष्य में मछली की उपलब्धता खतरे में पड़ सकती है।
- **जलवायु परिवर्तनः** जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के लिए नई रणनीतियाँ और शोध आवश्यक है जैसे कि जलवायु परिवर्तन किसानों को और भी संवेदनशील बनाती है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों, जैसे पानी के तापमान में वृद्धि और मौसम के बदलते मिजाज के बारे में जानकारी न होने से किसान अपनी खेती की रणनीतियों को समायोजित नहीं कर पाते, जिससे उन्हें भारी नुकसान होता है।

सतत मत्स्यपालन में नवाचार और सहयोग

सतत मत्स्यपालन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कुछ नवाचार और सहयोग निम्नवत हैं:

- **तकनीकी नवाचारः** आरएएस, बायोफ्लॉक, और सटीक जलीय कृषि (चतमबपेपवद ुनंबनसजनतम) जैसी तकनीकों को व्यापक रूप से अपनाना।
- **प्रशिक्षण और क्षमता निर्माणः** मछुआरों और मत्स्य किसानों को आधुनिक, टिकाऊ तकनीकों और बेहतर प्रबंधन प्रथाओं में प्रशिक्षित करना।
- **मछली पकड़ने के उपकरण में सुधारः** पर्यावरण के अनुकूल मछली पकड़ने के गियर को बढ़ावा देना जो गैर–लक्ष्य प्रजातियों को कम नुकसान पहुँचाए।
- **मूल्य श्रृंखला का विकासः** फसल कटाई के बाद के नुकसान को कम करने और उत्पादों

के मूल्य संवर्धन के लिए प्रसंस्करण, पैकेजिंग और विपणन में सुधार।

- **अंतर्राष्ट्रीय सहयोगः** अत्यधिक मछली पकड़ने और अवैध मछली पकड़ना जैसे मुद्दों से निपटने के लिए क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग बढ़ाना।

सरकारी पहल और योजनाएँ

भारत सरकार मत्स्यपालन क्षेत्र को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण योजनाएं और पहल चला रही है। इनमें से सबसे प्रमुख प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना (पी एम एम एस वाई) है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य मछली उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ाना, मछुआरों की आय दोगुनी करना, और मत्स्यपालन क्षेत्र का आधुनिकीकरण करना है। पी एम एम एस वाई के तहत किसानों को सब्सिडी और वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है, खासकर महिलाओं और अनुसूचित जाति जनजाति वर्ग के लिए। इसके अलावा, किसान क्रेडिट कार्ड (के सी सी) योजना को भी मत्स्यपालकों तक बढ़ाया गया है ताकि वे आसानी से ऋण प्राप्त कर सकें। राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड, हैदराबाद जैसी संस्थाएं भी मत्स्यपालकों को प्रशिक्षण और बीमा जैसी सुविधाएँ प्रदान करती हैं। ये पहलें न केवल किसानों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाती हैं, बल्कि टिकाऊ और जिम्मेदार मत्स्यपालन को भी बढ़ावा देती हैं।

भविष्य की राहः सतत विकास और आत्मनिर्भरता

भविष्य में मत्स्यपालन क्षेत्र में सतत विकास और आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए भारत सरकार कई कदम उठा रही है। पीएमएमएसवाई जैसी पहलें इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। इन पहलों का उद्देश्य मछली उत्पादन को बढ़ावा देना, मछुआरों की आय बढ़ाना और समुद्री संसाधनों का जिम्मेदारी से उपयोग करना है। भविष्य में, टिकाऊ जलीय कृषि पर और अधिक जोर दिया जाएगा, जिसमें आर.ए.एस. बायोफ्लोक, और केज कल्चर हैं। इससे कम जगह में अधिक उत्पादन संभव होगा और पानी का सही उपयोग सुनिश्चित होगा। साथ ही, अवैध, असूचित और अनियमित मछली पकड़ने पर नियंत्रण के लिए सख्त नियम बनाए जा रहे हैं। इन प्रयासों से भारतीय मत्स्यपालन क्षेत्र न केवल आत्मनिर्भर बनेगा, बल्कि वैश्विक बाजार में भी अपनी जगह बना पाएगा।

निष्कर्ष

सतत मत्स्यपालन एक ऐसा दृष्टिकोण है जो वर्तमान और भविष्य की जरूरतों को संतुलित करता है। यह न केवल आर्थिक समृद्धि सुनिश्चित करता है, बल्कि पर्यावरण की सुरक्षा भी करता है। आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके, हम मछली उत्पादन बढ़ा सकते हैं, मछुआरों की आय में सुधार कर सकते हैं और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र को भी बचा सकते हैं। इस तरह, हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि हमारी आने वाली पीढ़ियों को भी स्वस्थ और प्रचुर समुद्री संसाधन उपलब्ध हो सके। यह विकास और संरक्षण के बीच एक सही संतुलन स्थापित करने का मार्ग है, जिससे हम सभी को लाभ होगा।

****

हर्बल अर्कों का मत्स्य कायिकी पर सकारात्मक प्रभाव

राजेश कुमार, राजीव रंजन
केंद्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान (मुंबई)

मत्स्य पालन और जलीय कृषि वैश्विक खाद्य उत्पादन के सबसे तेजी से विकसित होने वाले क्षेत्रों में शामिल हैं, जो न केवल खाद्य सुरक्षा, बल्कि आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हालांकि, यह क्षेत्र कई गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है, जैसे रोग प्रकोप, जल गुणवत्ता में गिरावट, पर्यावरणीय तनाव, तथा सिंथेटिक रसायनों और एंटीबायोटिक्स का अत्यधिक उपयोग। हाल के वर्षों में एंटीबायोटिक प्रतिरोध, रासायनिक अवशेषों और पारिस्थितिक प्रभावों को लेकर बढ़ती चिंता ने सतत मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए पर्यावरण–अनुकूल विकल्पों की आवश्यकता को उजागर किया है। ऐसे विकल्पों में हर्बल अर्क एक संभावित प्राकृतिक समाधान के रूप में सामने आए हैं।

औषधीय पौधों से प्राप्त हर्बल अर्कों में अल्कलॉइड्स, फ्लेवोनॉइड्स, टैनिन्स, टरपेनॉइड्स और सैपोनिन्स जैसे जैव–सक्रिय यौगिक मौजूद होते हैं, जो रोगाणुरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, प्रतिरक्षा–वर्धक और वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले गुणों से भरपूर होते हैं। इनका उपयोग मछलियों और शंख–झींगा वर्ग के जलीय जीवों में प्रतिरक्षा क्षमता बढ़ाने, आहार दक्षता सुधारने, वृद्धि प्रदर्शन को बेहतर बनाने और तनाव सहनशीलता बढ़ाने के लिए किया जाता है, साथ ही ये पर्यावरण में कोई हानिकारक अवशेष नहीं छोड़ते।

सिंथेटिक दवाओं की तुलना में हर्बल अर्क अधिक जैव–अवक्रमणीय, सस्ते और स्थानीय रूप से उपलब्ध होते हैं, जिससे ये सतत जलीय कृषि के लिए उपयुक्त समाधान बनते हैं। मत्स्य पालन और जलीय कृषि में हर्बल अर्क का समावेश न केवल एंटीबायोटिक्स पर निर्भरता को कम करता है, बल्कि पशु कल्याण को भी बढ़ावा देता है और पर्यावरणीय दृष्टि से जिम्मेदार उत्पादन को सुनिश्चित करता है। सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता वाले जलीय उत्पादों की बढ़ती वैश्विक मांग के बीच, पौध–आधारित उपचार मत्स्य स्वास्थ्य के संरक्षण और इस उद्योग की दीर्घकालिक स्थिरता के लिए एक समग्र एवं प्राकृतिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं।

शिमला मिर्च (कैप्सिकम) अर्क

नाइल तिलापिया में 1.6 ग्राम प्रति किलोग्राम आहार की मात्रा में शिमला मिर्च अर्क के प्रयोग से वृद्धि प्रदर्शन, भोजन रूपांतरण अनुपात तथा पाचन एंजाइमों की गतिविधि में उल्लेखनीय सुधार देखा गया है। यह अर्क वृद्धि से जुड़े जीन, जैसे इंसुलिन जैसे वृद्धि कारक–1 की अभिव्यक्ति को बढ़ावा देता है, जबकि मायोस्टैटिन जैसे वृद्धि को अवरुद्ध करने वाले जीन की क्रियाशीलता को दबा देता है। साथ ही, यह मछलियों की सामान्य प्रतिरक्षा प्रणाली को भी सुदृढ़ करता है, जिसमें सी–3 पूरक प्रणाली की गतिविधि और विशिष्ट कोशिकीय प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं में वृद्धि देखी गई है। प्रतिरक्षा में यह सुधार शरीर में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट क्रियाओं की तीव्रता तथा प्रतिरक्षा संबंधी जीनों की अभिव्यक्ति में बढ़ोतरी के माध्यम से स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस प्रकार, शिमला मिर्च अर्क न केवल मछलियों की वृद्धि को बढ़ाता है, बल्कि उनके पाचन और प्रतिरक्षा तंत्र को भी प्रभावी ढंग से मजबूत करता है।

हल्दी अर्क

स्पॉटेड सीबास (लेटियोलाब्रेक्स मैक्यूलैटस) में 2 से 4 ग्राम प्रति किलोग्राम की मात्रा में जलयुक्त हल्दी अर्क को आहार अनुपूरक के रूप में शामिल किए

जाने पर वृद्धि प्रदर्शन या आहार उपयोगिता में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं देखा गया, हालांकि वजन में हल्की वृद्धि अवश्य दर्ज की गई। इस प्रयोग के दौरान मछलियों के यकृत में एंटीऑक्सीडेंट संकेतकों जैसे कुल एंटीऑक्सीडेंट क्षमता (टी–एओसी), सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज (एसओडी), कैटालेज (कैट) और ग्लूटाथायोन परऑक्सीडेज (जीपीएक्स) के स्तर में वृद्धि पाई गई, जबकि यकृत क्षति से जुड़े संकेतकोंकृजैसे ग्लूटामिक ऑक्सालोएसेटिक ट्रांसएमिनेज (जीओटी), ग्लूटामिक पायुरुविक ट्रांसएमिनेज (जीपीटी) और लैक्टेट डिहाइड्रोजेनेज (एलडीएच)कृ में उल्लेखनीय कमी देखी गई। इसके अतिरिक्त, हल्दी अर्क को मछलियों को ऑक्सीडेटिव तनाव से बचाने में प्रभावी माना गया है, जो एनआरएफ2, एचओ–1 तथा जीसीएलसी जैसे एंटीऑक्सीडेंट जीनों की अभिव्यक्ति में वृद्धि के माध्यम से संभव होता है (वांग एट अल., 2024)।

अदरक अर्क

सामान्य कार्प में 0.2 से 0.4 प्रतिशत की मात्रा में आहार में अदरक अर्क को सम्मिलित करने पर वृद्धि से संबंधित मानकों में उल्लेखनीय सुधार देखा गया है। इसमें भोजन रूपांतरण अनुपात, वजन वृद्धि और विशिष्ट वृद्धि दर जैसे संकेतकों में सकारात्मक परिवर्तन शामिल हैं। साथ ही, अदरक अर्क के प्रभाव से लाल और श्वेत रक्त कोशिकाओं की संख्या, हीमाटोक्रिट मान, हीमोग्लोबिन स्तर, कुल प्रोटीन, एल्ब्यूमिन, ग्लोब्युलिन, लाइसोजाइम, सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज, कैटलेज और कुल इम्युनोग्लोब्युलिन जैसे प्रतिरक्षा तथा जैव–रासायनिक संकेतकों में भी महत्वपूर्ण वृद्धि पाई गई है (मोहम्मदी एट अल., 2020) । यह दर्शाता है कि अदरक अर्क न केवल मछलियों की वृद्धि को बढ़ावा देता है, बल्कि उनके रक्त संबंधी और प्रतिरक्षा मापदंडों को भी सुदृढ़ करता है।

हल्दी और अदरक अर्क

आहार में 1 प्रतिशत की मात्रा में एकल रूप से या संयोजन के रूप में दिए गए हल्दी और अदरक अर्क से सिल्वर कार्प में वृद्धि दर, आहार सेवन, विशिष्ट वृद्धि दर और जीवित रहने की दर में सुधार होता है। यह हर्बल अनुपूरक भारी धातु द्वारा उत्पन्न विषाक्तता के प्रतिकूल शारीरिक प्रभावों को कम करने में सक्षम माना गया है। यह पूरकता रक्त संबंधी मापदंडों (आरबीसी, डब्ल्यूबीसी, एचबी) को प्रभावी रूप से पुनः स्थापित करती है और ऑक्सीडेटिव तनाव सूचक (मैलोनडिआल्डिहाइड) को भी घटाती है। हल्दी–अदरक युक्त आहार, भारी धातु से प्रेरित यकृत क्षति की रिकवरी में भी अधिक प्रभावी पाया गया है । मछलियों के आहार में 200 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम की दर से मोरिंगा का जल अर्क सम्मिलित किए जाने पर वजन वृद्धि, विशिष्ट वृद्धि दर तथा भोजन रूपांतरण अनुपात में उल्लेखनीय सुधार देखा गया है। यह खुराक नाइल तिलापिया में संतुलित वृद्धि और पोषण उपयोगिता को बढ़ावा देती है। हालांकि, जब इसकी मात्रा 200 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम से अधिक की जाती है, तो यह मछलियों पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। अधिक मात्रा में मोरिंगा अर्क का प्रयोग यकृत ऊतकों को गंभीर क्षति पहुंचाता है, जिससे कास्पेस–3 की अधिक अभिव्यक्ति और कोशिका मृत्यु में वृद्धि देखी जाती है। वहीं, 200 मिलीग्राम प्रति किलोग्राम की उपयुक्त खुराक पर प्लाज्मा प्रोटीन और ग्लोब्युलिन स्तर में वृद्धि होती है, तथा रक्त संबंधी सूचकांकों जैसे लाल रक्त कोशिकाएं (आरबीसी), हीमोग्लोबिन (एचबी) और पैक्ड सेल वॉल्यूम (पीसीवी) में भी सकारात्मक सुधार देखा गया है।

एलोवेरा अर्क

कतला मछली के आहार में 3 प्रतिशत की दर से एलोवेरा अर्क के अनुपूरण से वृद्धि संबंधी मापदंडों में स्पष्ट सुधार देखा गया है। इसमें वजन वृद्धि (206.14 प्रतिशत), विशिष्ट वृद्धि दर में वृद्धि तथा भोजन रूपांतरण अनुपात में सुधार (1.33) शामिल हैं। इसी सांद्रता पर कच्चे प्रोटीन, वसा और कुल

ऊर्जा की स्पष्ट पाचन क्षमता सबसे अधिक दर्ज की गई। साथ ही शव प्रोटीन और राख सामग्री में वृद्धि हुई, जबकि शरीर में वसा और नमी की मात्रा में कमी पाई गई। एलोवेरा अर्क के प्रभाव से रक्त संबंधी मापदंडों जैसे लाल रक्त कोशिकाओं (आरबीसी), श्वेत रक्त कोशिकाओं (डब्ल्यूबीसी), और हीमोग्लोबिन स्तर में भी सुधार देखा गया। इसके अलावा, एंटीऑक्सीडेंट एंजाइमों तथा प्रतिरक्षा संकेतकों जैसे लाइसोजाइम और ग्लोब्युलिन के स्तर में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई (यूसुफ एवं सहयोगी, 2025)। इस प्रकार, एलोवेरा अर्क का नियंत्रित अनुपूरण कतला मछली की वृद्धि, पोषण उपयोगिता, शरीर संरचना तथा प्रतिरक्षा प्रणाली के लिए लाभकारी सिद्ध होता है।

धनिया अर्क

2 प्रतिशत कोरिएंड्रम सैटिवम (धनिया) बीज अर्क से पूरित आहार, रेनबो ट्राउट की वृद्धि क्षमता और रोग प्रतिरोधक शक्ति पर अत्यंत लाभकारी प्रभाव दिखाता है। 2 प्रतिशत धनिया बीज अर्क युक्त आहार के सेवन से मछलियों में अधिक विशिष्ट वृद्धि दर, अंतिम वजन और स्थिति गुणांक प्राप्त हुए हैं। इसके अतिरिक्त, हीमाटोक्रिट और हीमोग्लोबिन स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि पाई गई, साथ ही लाइसोजाइम व कॉम्प्लिमेंट गतिविधि में भी सुधार देखा गया। इस अर्क के कारण येर्सिनिया रकेरी संक्रमण के विरुद्ध मछलियों की जीवित रहने की दर भी बेहतर पाई गई।

अमरूद अर्क

साइडियम गुआजावा (अमरूद) की पत्तियों के जल और एथेनॉल अर्क को आहार में सम्मिलित करने से ओरियोक्रोमिस मोसाम्बिकस मछली में वृद्धि से संबंधित मापदंडों जैसे अंतिम वजन, फीड कन्वर्जन अनुपात और विशिष्ट वृद्धि दर में उल्लेखनीय सुधार देखा गया। इसके साथ ही, गैर–विशिष्ट कोशिकीय प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं जैसे मायलोपरऑक्सीडेज, रिएक्टिव ऑक्सीजन और रिएक्टिव नाइट्रोजन गतिविधियों में भी सुधार हुआ। ह्यूमोरल प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं जैसे कॉम्प्लिमेंट गतिविधि, एंटी–प्रोटीएस, अल्कलाइन फॉस्फेटेज, और लाइसोजाइम गतिविधि में भी उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई। साथ ही, एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम जैसे एसओडी, जीपीएक्स और कैट की गतिविधियों में भी सुधार पाया गया। इन सभी प्रभावों के फलस्वरूप एरोमोनास हाइड्रोफिला संक्रमण के विरुद्ध ओरियोक्रोमिस मोसाम्बिकस की रोग प्रतिरोधक क्षमता में भी वृद्धि हुई ।

रोजमेरी अर्क

सामान्य कार्प के आहार में 2 से 3 प्रतिशत तक रोजमेरी पत्ती के अर्क को सम्मिलित करने से फीड कन्वर्जन अनुपात और प्रोटीन दक्षता अनुपात दोनों में सुधार देखा गया है। प्लाज्मा प्रतिरक्षा मानकों में उल्लेखनीय सुधार हुआ, जिनमें लाइसोजाइम गतिविधि, कुल इम्युनोग्लोब्युलिन, और कुल प्रोटीन स्तर शामिल हैं। इसके साथ ही, सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज और कैटलेज जैसे एंटीऑक्सीडेंट एंजाइमों की गतिविधियों में वृद्धि तथा मैलोनडिआल्डिहाइड की मात्रा में कमी देखी गई। इसके अतिरिक्त, प्लाज्मा कोर्टिसोल और ग्लूकोज स्तर में कमी के कारण भीड़भाड़ से उत्पन्न तनाव को सहन करने की बेहतर क्षमता भी प्रकट होती है।

दालचीनी अर्क

10 ग्रामधकिलोग्राम आहार की दर से दालचीनी (सिनामोमम जेलेनिकम) के पूरक आहार ने नाइल तिलापिया मछलियों की वृद्धि क्षमता में महत्वपूर्ण सुधार किया, जिसमें अंतिम शरीर भार, भार वृद्धि प्रतिशत, विशिष्ट वृद्धि दर, और आहार सेवन में वृद्धि देखी गई। यह पूरकता रक्त संबंधी मानकों में भी सुधार लाती है, जैसे कि श्वेत रक्त कोशिकाओं और लाल रक्त कोशिकाओं की संख्या, हीमोग्लोबिन की सांद्रता, और हीमैटोक्रिट मूल्यों में वृद्धि। दालचीनी ने सीरम प्रोटीन, एल्ब्युमिन और ग्लोब्युलिन के स्तर को भी बढ़ाया, जो पोषण और प्रतिरक्षा स्थिति में सुधार का संकेत है। ऑक्सीडेटिव

तनाव के संदर्भ में, दालचीनी ने यकृत में मेलोनडायएल्डिहाइड के स्तर और डीएनए विखंडन को कम किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह लिपिड पेरऑक्सिडेशन को कम करने और कोशिका क्षति से सुरक्षा प्रदान करने में सहायक है। यह सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज, कैटालेज, और कुल एंटीऑक्सीडेंट क्षमता जैसी एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम गतिविधियों को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाती है, जिससे मछली ऑक्सीडेटिव तनाव का बेहतर ढंग से सामना कर पाती है। दालचीनी ने प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं में सुधार किया, जैसे कि सीरम लाइसोजाइम गतिविधि, रेस्पिरेटरी बर्स्ट गतिविधि, और कुल इम्युनोग्लोब्युलिन स्तर में वृद्धि। इसके अतिरिक्त, लेड से प्रभावित मछलियों में दालचीनी ने रक्त में कोर्टिसोल, ग्लूकोज और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम किया, जो तनाव में कमी का संकेत है। यह मछली के शरीर में सीसे के संचय को भी उल्लेखनीय रूप से कम करती है, जिससे यह पता चलता है कि इसमें धातु निष्कासन या डिटॉक्सिफाइंग प्रभाव हो सकता है ।

गेंदा अर्क

गेंदे के फूल के अर्क ने स्वॉर्डटेल मछली की त्वचा की रंगत को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाया, जिसका कारण इसके उच्च कैरोटेनॉयड विशेष रूप से ल्यूटीन और अन्य जैंथोफिल्स की उपस्थिति है। गेंदे से युक्त आहार पाने वाली मछलियों के ऊतकों में कैरोटेनॉयड की मात्रा नियंत्रण समूह की तुलना में लगभग दोगुनी पाई गई, जिससे उनकी त्वचा की रंगत और अधिक चमकीली और आकर्षक बन गई। विकास प्रदर्शन के मामले में भी, गेंदे के आहार पर रखी गई स्वॉर्डटेल मछलियों में सभी आहार समूहों में सबसे अधिक अंतिम औसत वजन और विशिष्ट विकास दर दर्ज की गई। साथ ही, इन मछलियों में भोजन रूपांतरण अनुपात सबसे कम पाया गया, जो पोषक तत्वों के बेहतर उपयोग और आहार की प्रभावशीलता को दर्शाता है। इसके अतिरिक्त, गेंदे के अर्क से आहार पाने वाले समूह में 100 प्रतिशत जीवित रहने की दर दर्ज की गई, और पूरी परीक्षण अवधि में किसी भी बीमारी या असामान्यता का कोई लक्षण नहीं देखा गया। यह दर्शाता है कि यह पूरक मछली पालन के लिए सुरक्षित और लाभकारी है। गेंदे का फूल एक प्राकृतिक, प्रभावशाली और कम लागत वाला आहार पूरक सिद्ध हुआ है, जो स्वॉर्डटेल मछली की रंगत, वृद्धि और स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है ।

निष्कर्ष

शिमला मिर्च (कैप्सिकम), हल्दी, अदरक, मोरिंगा, घृतकुमारी (एलोवेरा), धनिया, अमरूद, रोजमेरी, इसैटिडिस रेडिक्स और जेनीपोसाइड जैसे विविध हर्बल अर्कों ने जलकृषि क्षेत्र में उल्लेखनीय लाभ प्रदर्शित किए हैं। इन अर्कों का उपयोग मछलियों की विकास दर बढ़ाने, आहार उपयोग दक्षता सुधारने, प्रतिरक्षा प्रणाली को सशक्त बनाने, एंटीऑक्सीडेंट सुरक्षा प्रदान करने तथा तनाव सहनशीलता बढ़ाने में सहायक रहा है, और यह प्रभाव विभिन्न मछली प्रजातियों में स्पष्ट रूप से देखा गया है। इसके अतिरिक्त, कई हर्बल अर्कों ने ऑक्सीडेटिव तनाव, भारी धातु विषाक्तता तथा रोगजनक संक्रमणों के विरुद्ध सुरक्षात्मक प्रभाव भी दिखाए हैं, जिससे मछलियों की समग्र स्वास्थ्य स्थिति में सुधार होता है। हालाँकि, इन अर्कों की प्रभावशीलता खुराक और प्रजाति–विशिष्ट प्रतिक्रियाओं पर निर्भर करती है। अधिक मात्रा में उपयोग से कभी–कभी नकारात्मक प्रभाव भी उत्पन्न हो सकते हैं, जैसे ऊतक क्षति या कोशिका मृत्यु। कुल मिलाकर, पौध–आधारित पूरक जलकृषि को अधिक सुरक्षित, स्वास्थ्य–सम्मत और पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ बनाने के लिए एक प्रभावशाली एवं प्राकृतिक विकल्प के रूप में उभर कर सामने आए हैं, जो सतत मत्स्य पालन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

****

बायोफ्लोक तकनीकी से मछली पालन पद्धति

नरेंद्र कुमार वर्मा
मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

बायोफ्लॉक मछली पालन की अन्य तकनीकों के समान ही एक तकनीक है जिसमें भूमि के कम भाग पर या घर की छत पर ही टैंक (एफ.आर.पी./सीमेंटेड) बनवाकर मछली पालन किया जाता है। यह विधि उन स्थानों पर ज्यादा प्रयोग की जाती है जहां पानी की कमी है क्योंकि इस विधि में पानी की अदला–बदली बहुत कम या बिल्कुल भी नहीं होती है। पानी की कम लागत के कारण दूसरे किसान भी इस तकनीकी को अपना रहे हैं।

बायोफ्लॉक तकनीक में उन बैक्टीरिया का संवर्धन किया जाता है जिन्हें मछलियां भोजन के रूप में खा सकती हैं। बैक्टीरिया के संवर्धन की प्रक्रिया ठीक वैसी ही है जैसे कि दूध से दही जमाना। जिस प्रकार दूध से दही बनाने के लिए दूध में थोड़ा सा दही (इनोकुलम या जोरन या जामन भी कहते हैं) डालते हैं उसी प्रकार बायो फ्लॉक में बैक्टीरिया के संवर्धन के लिए निम्नलिखित वस्तुओं की आवश्यकता होती है जो इनोकुलम बनाने में मदद करते हैं–

- प्रोबायोटिक पाउडर (संवर्धित बैक्टीरिया के अच्छे उत्पादन के लिए)
- मछली पालन में उपयोग किए जाने वाले तालाब की ताजा गीली मिट्टी(मछली के खाने योग्य बैक्टीरिया को संवर्धित करने के लिए)
- गुड या गेहूं का आटा या टैपिओका पाउडर (कार्बन स्रोत के लिए)
- अमोनियम सल्फेट या यूरिया (नत्रजन स्रोत के लिए)

बायोफ्लॉक पोषण से भरपूर भोजन है जिसमें शुष्क अवस्था में 25–50 प्रतिशत तक प्रोटीन तथा 0.5–15 प्रतिशत तक वसा होती है। यह फास्फोरस के साथ–साथ विटामिन तथा मिनरल्स का एक बहुत अच्छा स्त्रोत है तथा यह प्रोबायोटिक्स के समान ही प्रभावकारी होता है।

कार्यविधि

- यह तकनीक मछली पालन के लिए फ्लॉक बनाने के सिद्धांत पर आधारित है ।
- प्रोबायोटिक, तालाब की मिट्टी, यूरिया/अमोनियम सल्फेट (नत्रजन स्रोत) तथा गुड़/गेहूं का आटा या टैपिओका पाउडर (कार्बन स्रोत) को एक बर्तन में लेकर अच्छी तरह से मिलाकर मिश्रण बना लेते हैं, इस मिश्रण को इनोकुलम या जोरन या जामन भी कहते हैं।
- इनोकुलम को पानी से भरे टब में डालकर मशीन के द्वारा वायु प्रवाह करते हैं। टब में डालने के लगभग 24 से 48 घंटे बाद टब में झाग बनने लगता है तथा एक प्रकार के सड़न की गंध आती है ऐसा होने से यह समझना चाहिए कि फ्लॉक बन कर तैयार है तथा अब इसके पानी को बड़े मछली पालने के टैंक में डाल देना चाहिए। झाग ना बनने की स्थिति में टब में कार्बन व नत्रजन स्रोत और डालना चाहिए।
- यह ध्यान रखना चाहिए कि टब में वायु प्रवाह निरंतर तथा बिना रुके होता रहे अन्यथा इनोकुलम सही से नहीं बनेगा।
- अब एक बड़े टैंक में जिसमें कि हमें मछली पालन करना है उसमें इस इनोकुलम को डालते हैं तथा टैंक की क्षमता के हिसाब से पानी डालकर मछली पालन शुरू कर देते हैं।
- टैंक में समय–समय पर कार्बन, नत्रजन व अन्य गैसों की मात्रा को मापते हैं तथा आवश्यकतानुसार कार्बन या नत्रजन स्रोत को

मिलाते हैं। टैंक में कार्बन व नत्रजन का अनुपात क्रमशः 10:1 रखा जाता है।

फ्लॉक की उपयोगिता

- फ्लॉक पाली गई मछलियों के लिए आहार का काम करता है।
- फ्लॉक टैंक में बनने वाली हानिकारक गैसों को उपयोग कर अच्छी गुणवत्ता वाले बैक्टीरिया के संवर्धन (पालन) में मदद करता है, इन बैक्टीरिया को मछलियां भोजन के रूप में खाती हैं ।
- फ्लॉक मछलियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता, जीवित रहने की दर तथा वृद्धि दर को भी बढ़ाता है।
- जल प्रदूषण को कम करता है तथा रोगजनकों की उत्पत्ति तथा उनके बढ़ने के जोखिम को भी रोकता है।
- यह प्रोटीन युक्त पूरक भोजन के उपयोग और उसकी लागत को कम करता है।

पाली जाने योग्य मछलियां

बायोफ्लॉक तकनीक उन मछलियों के लिए उत्तम सिद्ध होती है जिन्हें फ्लॉक से पोषक तत्व सीधे मिलते हैं। साधारणतरू इस तकनीक में उन मछलियों का पालन किया जाता है जो कम समय में बाजार में बेचने योग्य हो जाती हैं तथा जिनकी बाजार में मांग व मूल्य अन्य मछलियों की तुलना में ज्यादा होता।

फ्लॉक बनाने की विधि

15000 लीटर पानी के लिए फ्लॉक विकसित करने के लिए 150 लीटर इनोकुलम की आवश्यकता होती है।

150 लीटर क्षमता का टब लें तथा इसे पानी से पूरा भर दें

↓

एक बर्तन में–

15 ग्राम प्रोबियोटिक पाउडर

\+

3 किलो तालाब की ताजा मिट्टी

\+

1.5 ग्राम अमोनियम सल्फेट या यूरिया

\+

30 ग्राम गुड़ अथवा गेहूं का आटा अथवा टेपियोका पाउडर लें

↓

इन तीनों को आपस में अच्छी तरह से पानी की सहायता से मिला लें

↓

इस मिश्रण को 150 लीटर टब के पानी में मिलाकर वायु प्रवाह को चला दें, ध्यान रखें वायु प्रवाह रुकना नहीं चाहिए

↓

इस विधि से इनोकुलम 24 से 48 घंटे में तैयार हो जाता है जिसके बाद इस इनोकुलम के पानी को 15000 लीटर टैंक में डाल के फ्लॉक बनाते हैं

↓

इस विधि से तैयार फ्लॉक में कार्बन स्रोत के लिए रोज गुड़ या गेहूं या टेपियोका मिलाते हैं।

- फ्लॉक में कार्बन तथा नत्रजन का अनुपात 10:1 रखा जाता है।
- फ्लॉक की मात्रा 15 से 20 मिलीलीटर होने पर कार्बन स्रोत को डालना बंद कर देना चाहिए।
- अच्छी तरह से विकसित हुआ फ्लॉक धुंधला तथा पानी की सतह पर झाग लिए हुए होता है।
- यदि एमहॉफ कोन से मापने पर 25 से 30 मिलीलीटर/लीटर फ्लॉक बन रहा है तो यह मछली पालन के लिए उत्तम होता है।

उदाहरण:

- वायुस्वाशी मछलियां: सिंघी, मांगुर,पाबदा, कोई, पंगस आदि।
- अवायुस्वाशी मछलियां: कॉमन कार्प, रोहू, तिलापिया आदि।

तकनीकी विनिर्देश– 100 मी³ (7 टैंक)

क्र.	घटक	विवरण
1	7 टैंकों के का छेत्रफल	200 $मी^2$
2	बायोफ्लोक टैंक का आकार	4 मीटर व्यास और 1.5 मीटर ऊंचाई (1.20 मीटर पानी की गहराई)
3	प्रत्येक टैंक की जल धारण क्षमता	15,000 लीटर
4	जल गुणवत्ता पैरामीटर	घुलित ऑक्सीजन–5मिलीग्रा/ ली, तापमान–26–34°सेल्सियस, पी एच –7.5 से 8, टीडीएस–600पीपीएम, फ्लोक घनत्व–25–40 मलीग्रा/ ली, अमोनिया–0. 5 पीपीएम, नाइट्राइट–0.3 पीपीएम, नाइट्रेट–150 पीपीएम, क्षारीयता–120–280 पीपीएम
5	टैंक बनाने की सामग्री	तिरपाल/फाइबर/ एचडीपीई
6	स्टॉकिंग घनत्व	100 मचलियाँ प्रति मी³ (1000 मचलियाँ प्रति 15,000 ली टंक जगह की उपलब्धता के अनुसार)
7	संवर्धित प्रजाति	गिफ्ट तिलापिया (*ओरियोक्रोमिस निलोटिकस*)
8	जीवनदर	80 प्रतिशत
9	उपयोग किए जाने वाले चारे/खाने का प्रकार	फ्लोटिंग पेलेट फीड
10	उपयोग किए जाने वाले चारे/खाने की मात्रा	मछली के शारीरिक वजन का लगभग 2 से 3 प्रतिशत
11	खिलाने की आवृत्ति	प्रारंभिक अवस्था में 4 बार, बाद में प्रति दिन 2 बार
12	एफसीआर	1:1.2
13	संवर्धन की अवधि	6 महीने
14	प्रजाति का आकार/ शारीरिक भार (ग्राम)	500 ग्राम औसत भार
15	प्रति वर्ष फसलों की संख्या	2
16	उत्पादन	4.2 टन प्रति फसल (प्रति टैंक 600 किग्रा प्रति फसल)

बायोफ्लोक इकाई का लागत अनुमान:7 बायोफ्लोक टैंक

क्र सं	घटक	सं.	लगत (रु. में)	कुल (रु. लाख में)
पूंजीगत लागत				
1	तिरपाल/फाइबर टैंकों की स्थापना (15,000 ली क्षमता)	7	25,000/–	1.75

2	शेड की सामग्री और सहायक उपकरण फिक्सिंग शुल्क	200 मी²	120000 / —	1.20
3	जल आपूर्ति बोरवेल (3 एचपी)	1	100000	1.00
4	हवा, जल प्रवाह के लिए पीवीसी पाइप फिटिंग	-	75000	0.75
5	जाल और सहायक उपकरण	5	3000	0.15
6	एक ब्लोअर (1 एचपी), एयर स्टोन और अन्य सहायक उपकरण	1	30000	0.30
7	विद्युतीकरण	-	10000	0.10
8	पावर जनरेटर (2केवीए)	1	45000	0.45
9	तराजू	1	5000	0.05
10	विविध व्यय	-	-	0.20
कुल पूंजीगत लागत				**5.95**
एक फसल के लिए इनपुट लागत				

11	बीज लागत, फीड लागत, प्रोबायोटिक्स, टेस्ट किट आदि	1.50
	कुल इनपुट लागत (प्रति एक फसल)	**1.50**
	कुल योग	**7.45**

इनपुट लागत स्टॉकिंग घनत्व के आधार पर भिन्न हो सकती है।

पोर्टेबले बायोफ्लोक टैंक

सीमेंटेड बायोफ्लोक टैंक

"इमहोफ कोन" फ्लोक की मात्रा मापने का उपकरण

क्रस्टेशियन उपोत्पाद (काइटिन एवं काइटोसन) के औद्योगिक अनुप्रयोग

प्रिंस राज, रुकसार परवीन
मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

समुद्री भोजन को पोषक तत्वों का एक उत्कृष्ट स्रोत माना जाता है, जिसमें स्वास्थ्य के लिए लाभकारी ओमेगा–3 फैटी एसिड, संतुलित अमीनो एसिड प्रोफाइल, आवश्यक खनिज और विटामिन के साथ गुणवत्ता और आसानी से पचने योग्य प्रोटीन होते हैं। ये पोषण संबंधी लाभ समुद्री भोजनको पोषण के साथ–साथ सामाजिक सुरक्षा प्राप्त करने के साधन के रूप में काफी लाभ प्रदान करते हैं। समुद्री मछलियों में, झींगा मानव समुदाय के लिए सबसे पसंदीदा खाद्य पदार्थों में से एक है क्योंकि इसमें उच्च पोषण के साथ विशिष्ट सुगंध और स्वादिष्ट स्वाद भी होता है। भोजन के रूप में उपयोग किया जाने वाला झींगा का भाग मुख्यतः मांस वाला भाग होता है इसके अलावा झींगा के वे भाग जिनका आमतौर पर सेवन नहीं किया जाता है (जैसे इसका बाहरी खोल, पूँछ और सर) जो अक्सर बिना उपभोग के अपशिष्ट बन जाते है। समुद्री भोजन उद्योग वार्षिक रूप से लगभग 106 टन की कचरा उत्पन्न करते हैं, जिसमें से अधिकांश को कम्पोस्टिंग के लिए या पशु चारा और उर्वरक जैसे कम मूल्ययुक्त उत्पादों के रूप में बेचे जाते हैं। आधुनिक खाद्य उत्पादन बड़ी मात्रा में उप–उत्पादों को उत्पन्न करता है, जिनमें से अधिकांश अभी–भी कम उपयोग किए जाते हैं। फिर भी, इन खाद्य अपशिष्टों में अक्सर उच्च मूल्य के कई उपयोगी पदार्थ होते हैं, जिनमें कुछ ऐसे भी हो सकते हैं जिनके महत्वपूर्ण स्वास्थ्य लाभ एवं अन्य महत्वपूर्ण उपयोग होते हैं। ये अवशिष्ट पदार्थ प्रोटीन, लिपिड, पिगमेंट और छोटे अणुओं का एक उत्कृष्ट स्रोत हो सकते हैं। इन सभी उपोत्पाद में से काइटिन एक मुख्य उत्पाद है, जिसका आज के समय में बहुत महत्वपूर्ण उपयोग हैं। काइटिन या पॉली (बीटा –(1→4)– एन –एसिटाइल– डी –ग्लूकोसामाइन) एक प्राकृतिक पॉलीसेकेराइड है, जिसे पहली बार 1884 में पहचाना गया था. यह बायोपॉलिमर भारी संख्या में जीवित जीवों द्वारा संश्लेषित होता है और यह सेलूलोज के बाद सबसे प्रचुर मात्रा में पाया जाने वाला प्राकृतिक पॉलिमर है। झींगे के खोल में अपशिष्ट में तीन मुख्य पदार्थ होते हैं जिनमें प्रोटीन (25–44 प्रतिशत), कैल्शियम कार्बोनेट (45–50प्रतिशत), और काइटिन (15–20 प्रतिशत) मात्रा में उपस्थित होते हैं। मूल अवस्था में, काइटिन क्रमबद्ध क्रिस्टलीय माइक्रोफाइब्रिल्स के रूप में होता है जो आर्थ्रोपोड्स के एक्सोस्केलेटन (खोल) या कवक और यीस्ट की कोशिका दीवारों में संरचनात्मक घटक बनाते हैं।

काइटिन एवं काइटोसन का निष्कर्षण

काइटिन के उत्पादन के लिए कच्चे माल के रूप में मुख्यतः केकड़े और झींगे के बाहरी आवरण का इस्तेमाल किया जाता है। केकड़े और झींगे के बाहरी आवरण या अन्य किसी जीव में काइटिन, प्रोटीन के साथ एक जटिल नेटवर्क के घटक के रूप में पाया जाता है, जिस पर कठोर खोल बनाने के लिए कैल्शियम कार्बोनेट जमा होता है। काइटिन और प्रोटीन के बीच परस्पर क्रिया बहुत घनिष्ठ है और पॉलीसेकेराइड–प्रोटीन कॉम्प्लेक्स में प्रोटीन का एक छोटा सा अंश भी शामिल होता है। इस प्रकार, केकड़े और झींगे से काइटिन अलगकरने के लिए खोल (शेल) के दो प्रमुख घटकों को हटाने की आवश्यकता होती है, डिप्रोटीनाइजेशन (प्रोटीन को घोलने के लिए क्षारीय घोल का उपयोग किया जाता है) द्वारा प्रोटीन और डेमिनरलाइजेशन (कैल्शियम कार्बोनेट को घोलने के

लिए एसिड उपचार) द्वारा अकार्बनिक कैल्शियम कार्बोनेट, साथ में थोड़ी मात्रा में पिगमेंट और वसा जो आम–तौर पर इन दो चरणों के दौरान हटा दिए जाते हैं। इसके अलावा, रंगद्रव्य को हटाने और रंगहीन शुद्ध काइटिन प्राप्त करने के लिए अक्सर रंग हटाने का चरण जोड़ा जाता है।

विभिन्न रासायनिक क्रियाओं के कारण काइटिन में परिवर्तन होने से यह एक अघुलनशील और अल्प घुलनशील प्रकृति का होता है जिस कारण इसके प्रसंस्करण और उपयोग में बाधा आती है । अतः काइटिन से एक दूसरा यौगिक काइटोसन विकसित किया गया है जो अपने विभिन्न महत्वपूर्ण लाभों के कारण काफी क्षेत्रों में उपयोग में लाया जाता है। काइटोसन एक प्राकृतिक पॉलीसेकेराइड है जोकि काइटिन से डीएसिटाइलेशन प्रक्रिया के द्वारा उत्पादित किया जाता है। काइटोसन काइटिन का एक व्युत्पन्न है जिसमें ख्बीटा –(1–4)–2–एमाइन–2–डीऑक्सी–डी–ग्लूकोज, की संरचना होती है और इसे पॉलीकैटाइनिक पॉलिमर्स कक्षा में शामिल किया जाता है। यह यौगिक एक काइटोसन के बायोकंपैटिबल, स्वाभाविक तरीके से सड़नशील और नॉनटॉक्सिक गुणों के कारण इसके उपयोग करने की अत्यधिक अनुशंसा की जाती है। काइटोसन एक ऐसी यौगिक है जो पानी में अघुलनशील है, जबकि एच सी एल और एच एन ओ 3 में थोड़ी मात्रा में घुलनशील है। केकड़े, झींगा, सीप के गोले, कीड़े और अन्य समुद्री जानवर से प्राप्त अपशिष्ट कचरे में काइटोसन की काफी बड़ी मात्रा पायी जाती है इसे आसानी से प्राप्त किया जा सकता है जिस कारण समुद्री भोजन प्रसंस्करण उद्योगों के प्राप्त अपशिष्ट कचरे से इसे आसानी एवं कम लागत से निकला जाता है। काइटिन और काइटोसन के बीच का अंतर उनकी नाइट्रोजन सामग्री से परिभाषित होता है। यदि नाइट्रोजन 7 प्रतिशत से कम है, तो उस पॉलिमर को काइटिन कहा जाता है, और यदि कुल नाइट्रोजन सामग्री 7 प्रतिशत से अधिक है, तो इसे काइटोसन कहा जाता है।

काइटोसन की प्राकृतिकता अमीन समृद्धि समूह, प्राथमिक हाइड्रॉक्सिल समृद्धि समूह, और सेकेंडरी हाइड्रॉक्सिल समृद्धि समूह के अस्तित्व से जुड़ी होती है। इन समूहों के अस्तित्व के कारण, काइटोसन का रासायनिक प्रतिक्रियाशीलता काइटिन से अधिक होती है। ये समूह काइटोसन को प्रोटीन जैसे जैविक यौगिकों के साथ प्रभावांकन करने की क्षमता प्रदान करते हैं, इसलिए इसे विभिन्न व्यावहारिक उद्योगों और स्वास्थ्य से जुड़े क्षेत्रों में उपयोग के अधिक कारगर माना जाता है।

समुद्री भोजन के प्रसंस्कृत उद्योगों से प्राप्त अपशिष्ट पदार्थ

↓

डेमिनरलाइजेशन (अम्लीय उपचार)

↓

डिप्रोटीनाइजेशन (क्षारीय उपचार)

↓

काइटिन

↓

डीएसिटाइलेशन (क्षारीय उपचार)

↓

काइटोसन

काइटिन एवं काइटोसन का निष्कर्षण

काइटिन

काइटोसन

काइटिन एवं काइटोसन के अनुप्रयोग

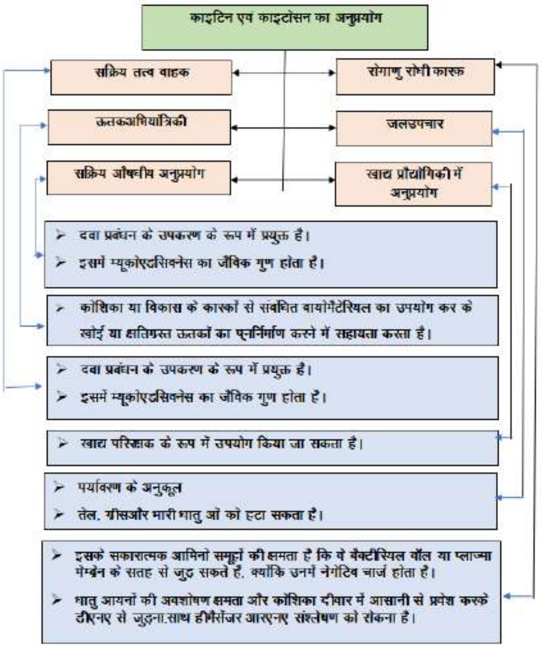

निष्कर्ष

काइटिन और काइटोसन के अद्वितीय जैव रासायनिक गुणों से पता चलता है कि उन्हें जैव चिकित्सा अनुसंधान में कई अनुप्रयोगों के साथ लगभग आदर्श बायोपॉलिमर के रूप में देखा जा सकता है। इन सामग्रियों को विभिन्न उत्पादों में संसाधित किया जा सकता है और दूसरी ओर नैनोमेडिसिन के बढ़ते क्षेत्र में बढ़ते अनुप्रयोगों के नैनोकणों को बनाना संभव है। इस समीक्षा में हमने काइटिन और काइटोसन के जैवसंश्लेषण, अलगाव और तकनीकी अनुप्रयोगों का अवलोकन प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। हालांकि, उपलब्ध सीमित स्थान में हम जैव चिकित्सा अनुप्रयोगों के केवल एक अंश को कवर करने में सक्षम हैं, और खाद्य पैकेजिंग और प्रसंस्करण, कृषि, जैव प्रौद्योगिकी और सौंदर्य प्रसाधन में अनुप्रयोगों की एक विस्तृत विविधता भी है।

****

मछली के लिए जीवित खाद्य जीवों का महत्व एवं इंफ्यूसोरिया का उत्तपादन

नरेश राज कीर, उदय कुमार
मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

मछलियों के उचित पोषण के लिए उनके आहार का चयन एक प्रमुख प्रक्रिया है। मछली के प्राकृतिक आहार में जीवित खाद्य जीवों का बहुत महत्व है। जीवित खाद्य जीवों से मछलियों को न केवल आवश्यक पोषक तत्व मिलते हैं, बल्कि यह उनके स्वास्थ्य और विकास के लिए भी अत्यधिक लाभकारी होते हैं। जीवित खाद्य जीवों को आमतौर पर पोषण के जीवित कैप्सूल के रूप में जाना जाता है क्योंकि उनमें सभी आवश्यक पोषक तत्व–प्रोटीन, लिपिड, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, खनिज, अमीनो एसिड और फैटी एसिड होते हैं। जीवित खाद्य जीव, मछली पालन और एक्वेरियम उद्योगों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मछलियों के लिए जीवित खाद्य जीव, जैसे कि डैफनिया, आर्टेमिया, माइक्रोवर्म्स, और ब्लडवर्म्स, प्राकृतिक आहार का हिस्सा होते हैं, और इन्हें विभिन्न मछलियों के लिए आदर्श भोजन माना जाता है।

कुछ जीवित प्रमुख खाद्य जीव

मछलियों के लिए जीवित खाद्य जीवों में विभिन्न प्रकार के जीवाणु, मच्छर के लार्वा, छोटे जलजीव, और पादप प्लवक आते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख खाद्य जीवों में रोटिफर, आर्टीमिया, डेफनिया, मोइना, इन्फुसोरिया, स्पिरुलिना, क्लोरेला इत्यादि शामिल हैं। ये जीव मछलियों के लिए आवश्यक

आर्टीमिया

कोपेपॉड

कृमि

रोटिफर

प्रोटीन, विटामिन, और खनिज प्रदान करते हैं, जो उनके स्वस्थ विकास के लिए आवश्यक होते हैं।

मछलियों के लिए जीवित खाद्य जीवों के लाभ

मछलियों को जीवित खाद्य जीव निम्नलिखित प्रकार से लाभकारी हो सकते है–

प्राकृतिक पोषण

जीवित खाद्य जीव मछलियों के लिए उनका प्राकृतिक आहार होते हैं। यह मछलियों को सही पोषक तत्व प्रदान करता है, जैसे की प्रोटीन, फैटी एसिड, और अन्य आवश्यक पोषक तत्व। इनका सेवन मछलियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करता है।

स्वास्थ्य वृद्धि और विकास

जीवित खाद्य जीवों से मछलियों को ज्यादा ऊर्जा और पोषक तत्व मिलते हैं, जिससे उनकी वृद्धि और विकास तेज होता है। यह विशेष रूप से मछली के अंडे से निकलने वाले लार्वा और छोटे मछलियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

पाचन में आसानी

जीवित खाद्य जीवों का पाचन मछलियों के लिए आसान होता है क्योंकि ये उनके प्राकृतिक आहार का हिस्सा होते हैं एवं प्राकृतिक भोजन में पाचन के लिए आवश्यक एंजाइम पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते है। इससे पाचन संबंधी समस्याएं नहीं आती है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि

जीवित खाद्य जीवों में पाए जाने वाले एंजाइम और जीवित बैक्टीरिया मछलियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होते हैं। ये मछलियों को संक्रामक रोगों से लड़ने में मदद करते हैं।

प्रजनन क्षमता में सुधार

जीवित खाद्य जीवों का आहार मछलियों की प्रजनन क्षमता को बढ़ाने में मदद करता है। इसमें मौजूद आवश्यक फैटी एसिड्स और प्रोटीन मछलियों के प्रजनन तंत्र को मजबूत बनाते हैं। यह मछलियों के लार्वा और किशोर अवस्था में तेजी से विकास करता है।

अलंकारी मछलियों का रंग

अलंकारी या सजावटी मछलियों को जीवित खाद्य जीव खिलाने से उनका रंग अत्यधिक मोहक होता है एवं उनकी सुंदरता को बढ़ता है। अलंकारी मछलियों के प्रजनन के दौरान उन्हें जीवित खाद्य जीवो को खिलाना अत्यंत लाभकारी होता है।

प्राकृतिक आहार

जब मछलियाँ जीवित आहार का सेवन करती हैं, तो उनका आचरण और व्यवहार भी पूरी तरह से सक्रिय रहता है। इससे उनकी शारीरिक सक्रियता और मानसिक उत्तेजना बनी रहती है, जो उनके समग्र स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है।

आसान तरीके से इन्फ्यूसोरिया की खेती

इन्फ्यूसोरिया सूक्ष्म जलीय जीव होते हैं, जो छोटे मछलियों और अन्य जलजीवों के लिए आहार के रूप में उपयोगी होते हैं। इनका उपयोग विशेष रूप से मछली पालन और एक्वेरियम में होता है। पैरामीशियम और स्टाइलोन्चिया मीठे पानी की प्रजातियां हैं। इनकी खेती विभिन्न तरीको से की जाती है जिनमे से कुछ सामान्य तरीके निम्नलिखित है।

- केले के छिलके का उपयोग करके
- घास का उपयोग करके
- लेटुस पत्तियों का उपयोग करके
- दूध का उपयोग करके
- एप्पल घोंघे का उपयोग करके

केले के छिलके का उपयोग करके इन्फुसोरिया की खेती

केला के छिलके को इन्फ्यूसोरिया कल्चर में इस्तेमाल करने के पीछे यह कारण है कि केला के छिलके में कार्बोहाइड्रेट्स और पोषक तत्व होते हैं, जो इन्फ्यूसोरिया को लिए आदर्श खाद्य स्रोत प्रदान करते हैं।

सामग्री

- 2–3 केले के छिलके
- पानी
- एक्वेरियम (50 लीटर) या जार (बड़े मुँह वाला कंटेनर)
- गर्म स्थान (सूरज की हल्की रोशनी)

केला के छिलके तैयार करना

केले के छिलकों को अच्छे से धो लें ताकि उनपर किसी प्रकार के रसायन या गंदगी न हो। छिलकों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लें। छोटे टुकड़े इन्फ्यूसोरिया के लिए अधिक पोषक तत्व प्रदान करेंगे और जल्दी से सड़ने में मदद करेंगे।

पानी में डालना

एक एक्वेरियम या जार में 50 लीटर पानी भरें। अब इस पानी में 2 से 3 केले के छिलके के छोटे–छोटे टुकड़े डालें। कंटेनर को कपड़े से ढक दें। इससे मच्छर एवं अन्य किट पतंगे अंदर प्रवेश न कर सके लेकिन हवा का आदान प्रदान बना रहे।

इन्फुसोरिया का विकास

एक्वेरियम या जार को गर्म और हल्की धूप में रखें। आपको इसे 1 हफ्ते तक ऐसे ही छोड़ना है ताकि केले के छिलके पानी में सड़ जाएं और इन्फ्यूसोरिया के लिए उपयुक्त पोषक तत्व पैदा हो सकें। 2 से 3 दिनों में पानी दूधिया हो जाएगा और उससे दुर्गंध आने लगेगी। जैसे ही छिलके सड़ने लगेंगे, पानी में धीरे–धीरे इन्फ्यूसोरिया विकसित होने लगेगा। धीरे धीरे पानी की सतह पर एक परत बनने लगेगी और लगभग 4 से 5 दिनों में पानी साफ हो जाएगा

और यह हल्का पीला पारदर्शी दिखाई देने लगेगा। यह हवा में फैले इन्फ्यूसोरिया बीजाणुओं के कारण होता है, ये इन्फुसोरिया बीजाणु पानी की सतह पर बनी बैक्टेरियल परत पर भोजन करते है जिससे पानी की सतह पर बनी परत टूट जाती है। और बाद में इनका घनत्व बढ़ने लगता है। यह मछली की प्रारंभिक अवस्था में खिलाने के लिए बहुत उपयोगी है। इसे 2–3 सप्ताह तक इस्तेमाल किया जा सकता है।

इन्फुसोरिया का उपयोग और बढ़ाना

यदि आपको और इन्फुसोरिया की आवश्यकता हो, तो आप पानी में थोड़ा और केले का छिलका डाल सकते हैं या फिर कुछ और समय के लिए इसे सड़ने के लिए छोड़ सकते हैं। आप इन्फुसोरिया के कल्चर को हर सप्ताह ताजे केले के छिलकों से बढ़ा सकते हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु

- छिलके को पानी में डालने से पहले यह सुनिश्चित करें कि पानी की गुणवत्ता ठीक हो, और उसमें किसी प्रकार के रसायन या गंदगी न हो।
- एक्वेरियम या जार को ढककर रखें ताकि उसमें बाहरी प्रदूषण न जा सके, लेकिन इसमें हवा का आवागमन भी हो सके।
- यदि इन्फुसोरिया की संख्या बढ़ने में समय लगे, तो चिंता न करें, यह प्रक्रिया धीरे–धीरे होती है।
- पानी में छोटे–छोटे जीवों को देखने के लिए माइक्रोस्कोप का उपयोग करें, ताकि आप इन्फुसोरिया की सही पहचान कर सकें।
- इस प्रक्रिया के माध्यम से आप आसानी से इन्फुसोरिया कल्चर कर सकते हैं और अपने एक्वेरियम या छोटे जलजीवों के लिए ताजे आहार का स्रोत बना सकते हैं।

निष्कर्ष

जीवित खाद्य जीव मछलियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि ये उन्हें आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करते हैं और उनके स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। मछली पालन के लिए इनका उपयोग मछलियों की वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता, और समग्र विकास के लिए फायदेमंद साबित होता है, इसलिए, जीवित खाद्य जीवों का उचित प्रबंधन और उपयोग मछली पालन उद्योग में सफलता प्राप्त करने के लिए एक आवश्यक कदम है।

****

मत्स्य उत्पाद को सुरक्षित रखने के उपाय

डॉ॰ मोहम्मद अमन हसन, डॉ॰ परमानंद प्रभाकर
मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

भारत में मत्स्य पालन एक महत्वपूर्ण व्यवसाय है जो लाखों लोगों की आजीविका का आधार है, साथ ही साथ नदियों, तालाबों, झीलों, समुद्रों और कृत्रिम जलाशयों से भी मछली उत्पादन किया जाता है। छोटी या अविकसित मछलियों को पकड़ना उत्पादन के लिए नुकसानदायक होता है। इससे वे प्रजनन करने से पहले ही समाप्त हो जाती हैं, इसलिए मछलियों की न्यूनतम लंबाई निर्धारित की गई है। सरकार द्वारा घोषित बंद अवधि (जैसे कि मानसून के दौरान) का पालन करने से मछलियाँ अंडे देने और प्राकृतिक रूप से बढ़ने का समय पा लेती हैं, जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है। मछलियाँ न केवल पोषण का अच्छा स्रोत हैं, बल्कि देश की अर्थव्यवस्था में भी बड़ा योगदान दे रही हैं। मछली एवं मछली के उत्पाद को सुरक्षित रखने से आय का स्रोत अधिक बढ़ जाता है। यदि हम समय रहते आवश्यक उपायों को अपनाएँ, तो मछलियाँ न केवल आज बल्कि, कुछ समय बाद भी खाने योग्य रह सकती हैं और जरूरतों को पूरा कर सकती है। इस लेख का उद्देश मत्स्य उत्पाद को सुरक्षित रखने के उपाय, उचित प्रसंस्करण के माध्यम, आर्थिक और पोषण संबंधी लाभ की जानकारी उपलब्ध करवाना है। मछली के उत्पाद को मुख्यतः तीन प्रसंस्करण विधि से संरक्षित किया जा सकता है जो निम्न हैं:

पारंपरिक मछली प्रसंस्करण और संरक्षण विधि

मछलियों का संरक्षण मानव सभ्यता की प्रारंभिक भोजन–संग्रह प्रणाली से जुड़ा हुआ है। मछली की मांसपेशियों में जल की मात्रा 60–80 % तक होती है, जिसके कारण यह सूक्ष्मजीवों द्वारा शीघ्र ही खराब हो सकती है। इस खराबी को रोकने के लिए संरक्षण की आवश्यकता होती है। छोटे और मध्यम स्तर पर मछली को संरक्षित करने के लिए नमक के साथ सुखाना, हवा में सुखाना, बर्फ में संग्रहण, धुआँ विधि (स्मोकिंग), और किण्वन जैसे पारंपरिक तरीके अपनाए जाते हैं। संरक्षण का मुख्य उद्देश्य मछली की मांसपेशियों में स्व–अपघटन (ऑटोलिसिस) को रोकना और उसमें उपस्थित पोषक तत्वों के कारण उत्पन्न होने वाले रोगजनक सूक्ष्मजीवों के प्रसार को नियंत्रित करना होता है। पारंपरिक तरीकों में मछली को संरक्षित करने के दो प्रमुख उपाय अपनाए जाते हैं– पहला, नमक के साथ या बिना नमक के विभिन्न तकनीकों द्वारा सुखाकर पानी की सक्रियता को कम करना; और दूसरा, किण्वन के माध्यम से हानिकारक सूक्ष्मजीवों को समाप्त करना, जिससे लाभकारी सूक्ष्मजीवों और ऑटोलिसिस की प्रक्रिया को सक्रिय किया जा सके, जो उत्पाद में वांछनीय ऑर्गेनोलेप्टिक विशेषताओं का विकास करती है। पारंपरिक संरक्षण विधियों में तापमान और नमक के प्रभाव से मछली में मौजूद प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा (लिपिड) में परिवर्तन होते हैं, जिससे उसकी पोषण गुणवत्ता में कमी आ सकती है। इन विधियों में रोगजनक सूक्ष्मजीवों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जाता है, क्योंकि ये प्रायः उनके विकास के लिए प्रतिकूल वातावरण उत्पन्न करते हैं या लाभकारी गैर–रोगजनक बैक्टीरिया को प्रतिस्पर्धा करने का अवसर देते हैं, जिससे खाद्य सुरक्षा के खतरे कम हो जाते हैं। नमक की उपस्थिति से पानी की सक्रियता घट जाती है, और जब इसे सुखाने की प्रक्रिया के साथ मिलाया जाता है, तो यह सूक्ष्मजीवों के विकास को सीमित करता है। हालांकि, यदि नमक की मात्रा और नमी का संतुलन ठीक नहीं रखा जाए, तो हेलोफिलिक (नमक–प्रिय) बैक्टीरिया और फफूंद (कवक) नमकीन सूखी मछलियों में सक्रिय हो सकते

हैं। शोध से यह ज्ञात हुआ है कि 30 % से कम नमी और 30 प्रतिशत से कम नमक सांद्रता होने पर हेलोफिलिक कवकों की वृद्धि देखी जाती है।

इस प्रकार, पारंपरिक मछली सुखाने की विधियों की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए, उन्हें वनस्पति विज्ञान आधारित उपायों, रासायनिक नियंत्रणों और अन्य तकनीकों के साथ संयोजित करना आवश्यक हो गया है, ताकि सूक्ष्मजीव संदूषण और माइकोटॉक्सिन से सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके। इसके अतिरिक्त, धुएँ के तरल का उपयोग एक सुरक्षित विकल्प के रूप में किया जाता है, जिसमें पॉलीसाइक्लिक एरोमैटिक हाइड्रोकार्बन नहीं होते। इस धुएँ के छिड़काव से न केवल मछली के स्वाद और गंध में सुधार होता है, बल्कि यह उसे सुरक्षित भी बनाता है। इन तकनीकों का मुख्य उद्देश्य मछली से नमी को हटाना, सूक्ष्मजीवों के विकास को रोकना, और अंततः मछली एवं मछली उत्पादों की शेल्फ लाइफ (भंडारण अवधि) को बढ़ाना होता है।

पारंपरिक मत्स्य उत्पाद क्रमशः— बर्फीली मछली, स्मोक्ड मछली, सूखी मछली और किण्वित मछली

आधुनिक मछली प्रसंस्करण और संरक्षण विधि

कच्ची मछली को भोजन के रूप में अधिक आकर्षक और सुरक्षित बनाने के लिए उसका उचित उपचार आवश्यक होता है। पकड़ी गई मछली को सबसे पहले इस प्रकार संसाधित किया जाता है कि उससे चिपके हुए अखाद्य घटक और भौतिक संदूषक हट जाएँ। आधुनिक मछली प्रसंस्करण और संरक्षण विधियों में मछली को फ्रीज करना, कैनिंग करना, नमी हटाकर जल गतिविधि को नियंत्रित करना, एडिटिव्स का उपयोग करना या विकिरण तकनीकों द्वारा उसकी मांसपेशियों की ऑर्गेनोलेप्टिक विशेषताओं को बनाए रखना शामिल है।

प्रसंस्करण का उद्देश्य ताजी मछली से ऐसे संशोधित उत्पाद तैयार करना है जो उपभोक्ताओं को पसंद आएं। यह प्रक्रिया मत्स्य उद्योग में मूल्य संवर्धन के माध्यम से लाभ और स्थिरता को बढ़ावा देती है। फ्रीजिंग एक प्रमुख प्रसंस्करण और संरक्षण विधि है, जो मछली उत्पादों की गुणवत्ता बनाए रखते हुए उन्हें अधिक निष्क्रिय बनाती है तथा हानिकारक जैविक और रासायनिक प्रतिक्रियाओं को धीमा करके भंडारण अवधि को बढ़ा देती है। फ्रीजिंग की प्रमुख विधियों में ब्लास्ट फ्रीजिंग, प्लेट फ्रीजिंग, विसर्जन फ्रीजिंग और स्प्रे फ्रीजिंग शामिल हैं। इन विधियों से मांस में बहुत कम परिवर्तन होता है और गुणवत्ता में न्यूनतम गिरावट आती है, जिससे मछली को कई महीनों तक संग्रहीत किया जा सकता है—विशेषकर तब, जब मछली पकड़ में कमी हो या मानसून बैन लागू हो। अच्छी गुणवत्ता वाली जमी हुई मछली को रेफ्रिजरेटेड स्थितियों में लंबी दूरी तक ले जाया जा सकता है और उन क्षेत्रों में निर्यात किया जा सकता है जहाँ ताजी मछली आसानी से उपलब्ध नहीं होती।

कैनिंग, खाद्य पदार्थों को ऊष्मा के प्रयोग द्वारा वायुरोधी रूप से सीलबंद कंटेनरों में संरक्षित करने की एक विधि है। इस तकनीक में खाद्य पदार्थों को कंटेनर में रखना और उन्हें हवाबंद करके बंद करना शामिल है। खाद्य पदार्थों के साथ—साथ कंटेनर में भी कई सूक्ष्मजीव होते हैं, जो गर्म करने से नष्ट हो जाते हैं। इसके अलावा, खाद्य पदार्थ पक जाता है और इसे या तो खाने के लिए तैयार कर दिया जाता है या फिर तैयार किया जाता है।

कंटेनर का कार्य अनिवार्य रूप से आस–पास के सूक्ष्मजीवों के प्रवेश को रोकना है, जिससे उत्पाद को अपेक्षाकृत लंबी अवधि के लिए कमरे के तापमान पर संग्रहीत किया जा सके। धातु (टिन) के डिब्बे महंगे होते हैं, जबकि रिटॉर्ट पाउच सस्ते होते हैं साथ ही साथ ये प्रसंस्करण समय को 30–35% तक कम कर देते हैं और गुणवत्ता की क्षति को भी कम करते हैं। उनकी शेल्फ लाइफ लंबी होती है और प्रसंस्करण, परिवहन और परोसने के लिए बहुत सुविधाजनक होते हैं।

उन्नत मछली प्रसंस्करण और संरक्षण विधि

आज के उपभोक्ता ताजी मछली की मांग कर रहे हैं– ऐसी मछली जो न्यूनतम हैंडलिंग के संपर्क में आई हो और जिस पर कोई थर्मल (तापीय) उपचार न किया गया हो। इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप मछली के संरक्षण के लिए गैर–थर्मल प्रसंस्करण विधियों में रुचि तेजी से बढ़ी है। उभरती हुई मछली प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियाँ मुख्यतः मछली उत्पाद की गुणवत्ता, शेल्फ लाइफ और खाद्य सुरक्षा को बेहतर बनाने पर केंद्रित हैं। इन तकनीकों में उच्च दाब प्रसंस्करण और विकिरण जैसी गैर–थर्मल विधियाँ, तथा माइक्रोवेव और ओमिक हीटिंग जैसी उन्नत थर्मल तकनीकें शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, मछली प्रसंस्करण में स्वचालन (Automation) और विकसित प्रणालियाँ (Advanced Systems) भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं– जैसे कि स्वचालित मछली पिंजरे और रोबोटिक प्रसंस्करण लाइनें, जो दक्षता और सटीकता में वृद्धि करती हैं। उभरती मछली प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियां बेहतर उत्पाद गुणवत्ता, विस्तारित शेल्फ लाइफ और बढ़ी हुई खाद्य सुरक्षा जैसे लाभ प्रदान करती हैं, लेकिन वे उच्च प्रारंभिक लागत, विशेष उपकरणों की आवश्यकता और संभावित पर्यावरणीय प्रभाव जैसी चुनौतियां भी प्रस्तुत कर सकती हैं। उच्च दाब प्रसंस्करण (एचपीपी) और विकिरण जैसी प्रौद्योगिकियां मछली के प्राकृतिक स्वाद, बनावट और पोषण मूल्य को संरक्षित कर सकती हैं, जबकि पारंपरिक तरीकों में ताप का उपयोग किया जाता है, जिससे इन गुणों में गिरावट आ सकती है। ये प्रौधोगिकियां हानिकारक रोगाणुओं और खराब करने वाले सूक्ष्मजीवों को समाप्त या कम कर सकती हैं, जिससे उपभोक्ताओं के लिए समुद्री खाध उत्पादों को सुरक्षित बनाने में मदद मिलेगी। एचपीपी और एमएपी जैसी कुछ प्रौगिकियां, रासायनिक परिरक्षकों पर अत्यधिक निर्भरता के बिना मछली के संरक्षण की अनुमति देती हैं, जो कि उपभोक्ताओं की प्राथमिकता हो सकती है। उभरती हुई प्रौद्योगिकियां अद्वितीय विशेषताओं और विस्तारित शेल्फ जीवन के साथ नवीन मछली उत्पादों के निर्माण को सक्षम करती हैं।

आधुनिक मत्स्य उत्पाद–जमे हुए और डिब्बाबंद उत्पाद

उन्नत मत्स्य प्रसंस्करण उत्पाद –एचपीपी और एमएपी मत्स्य उत्पाद

निष्कर्ष

मत्स्य उत्पाद को सुरक्षित रखने के उपाय समय, तकनीक और उपभोक्ता की अपेक्षाओं के अनुसार विकसित हुए हैं। पारंपरिक विधियाँ जैसे धूम्रीकरण, सुखाना और जमाना आज भी सरल व किफायती समाधान प्रदान करती हैं, जबकि आधुनिक तकनीकें जैसे उच्च–दाब प्रसंस्करण (एच पी पी), विकिरण और एम ए पी मछली की गुणवत्ता, पोषण और शेल्फ लाइफ को बनाए रखने में अधिक सक्षम हैं। अतः, मत्स्य संरक्षण के लिए पारंपरिक अनुभव और आधुनिक नवाचारों का संतुलित उपयोग ही एक प्रभावी एवं टिकाऊ उपाय है।

****

मत्स्य पालन में महिलाओं का योगदान: विकास की एक छुपी हुई ताकत

आदित्य कुमार
मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां मत्स्य पालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था– पोषण सुरक्षा और आजीविका के लिए एक अहम क्षेत्र बन चुका है। इस क्षेत्र में महिलाएं दशकों से सक्रिय रूप से जुड़ी रही हैं, हालांकि उनका योगदान अक्सर सहायक भूमिका तक सीमित मान लिया जाता है। जबकि सच्चाई यह है कि महिलाएं मत्स्य पालन की रीढ़ की हड्डी हैं। अगर उन्हें सही अवसर, तकनीकी प्रशिक्षण और वित्तीय सहायता मिले तो वे इस क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव ला सकती हैं। मत्स्य पालन का इतिहास हजारों वर्षों पुराना है। प्राचीन भारत में नदियों, तालाबों और समुद्री क्षेत्रों में मछली पकड़ने, सुखाने और संरक्षण करने की परंपरा थी, जिसमें महिलाओं की भागीदारी स्वाभाविक रूप से शामिल थी। वैदिक साहित्य में भी जलस्रोतों और जीवों का उल्लेख मिलता है। महिलाओं की यह भूमिका पीढ़ियों से चली आ रही है, और आज भी पारंपरिक ज्ञान के आधार पर वे कई मछली पालन गतिविधियों में योगदान दे रही हैं।

वर्तमान में महिलाओं की भूमिका

वर्तमान में महिलाओं की भूमिका, अहम है जैसे कि उत्पादन संबंधी योगदान, महिलाएं तालाबों की सफाई, जल की गुणवत्ता बनाए रखने, मछलियों के लिए चारा तैयार करने और उनके स्वास्थ्य की निगरानी जैसे कार्यों में सक्रिय होती हैं। वे मछली बीज उत्पादन तथा नर्सरी प्रबंधन जैसे तकनीकी कार्यों में भी संलग्न हैं। कई महिलाएं स्वयं छोटे तालाब किराए पर लेकर या स्वय सहायता समूह के माध्यम से मत्स्य पालन को आजीविका का स्रोत बना रही हैं। विपणन और प्रसंस्करण में भी महिला, अपना योगदान दे रही हैं। महिलाएं मछलियों की सफाई, सुखाने, नमकीन और अचार बनाने– मछली पाउडर जैसी वैल्यू ऐडेड उत्पाद तैयार करने जैसे काम करती हैं। वे स्थानीय बाजारों– ग्रामीण हाटों और शहरी मंडियों में मछली बेचने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उदाहरणस्वरूप, केरल, ओडिशा और पश्चिम बंगाल में मछली व्यापार में 60 प्रति"ात से अधिक विक्रेता महिलाएं हैं। उपकरण निर्माण में भी महिला, अपना योगदान दे रही हैं, जैसे कि हाथ से जाल, टोकरी, कंटेनर आदि बनाना जिसमें वे कम लागत में स्थनीय संसाधनों का उपयोग कर उपकरण बनाने का कार्य करती हैं।

सामाजिक–आर्थिक महत्व

मत्स्य पालन से अर्जित आय का उपयोग महिलाएं बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण और घर के अन्य खर्चों में करती हैं। इससे न केवल परिवार की स्थिति बेहतर होती है, बल्कि महिला आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनती हैं। मत्स्य पालन से जुड़ी महिलाएं केवल पारंपरिक भूमिका तक सीमित नहीं हैं, बल्कि निर्णय लेने, समूह प्रबंधन, प्रशिक्षण देने जैसे कार्यों में भी हिस्सा ले रही हैं। इससे समाज में उनकी स्थिति और आत्मविश्वास दोनों बढ़ा है। महिलाएं मछली जैसे प्रोटीन युक्त भोजन का उत्पादन व उपयोग सुनिश्चित करती हैं, जिससे कुपोषण जैसी समस्याएं दूर होती हैं, खासकर बच्चों और गर्भवती महिलाओं के लिए यह अहम है।

महिलाओं के सामने चुनौतियाँ

महिलाओं के सामने अनेकों चुनौतियॉ है जैसे वित्तीय सहायता के लि, परिवार पर निर्भर रहना पडता है बैंकों, सहकारी समितियों से लोन या सब्सिडी प्राप्त करने में भी महिलाओं को कठिनाई होती है। एवं तकनीकी प्रशिक्षण की कमी होती है जिससे उनका उत्पादन स्तर कम होता है। कई

ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं निर्णय लेने या समूह नेतृत्व में भाग नहीं ले पातीं है,, जिससे उनका विकास सीमित रहता है। सरकारी योजनाओं में महिला योगदान का सही आंकलन नहीं किया जाता है जिससे नीतियां प्रभावी नहीं बन पातीं है। अधिकतर महिलाएं खुद बाजार में नहीं जातीं, जिससे उन्हें बिचौलियों पर निर्भर रहना पड़ता है।

सरकारी योजनाएं और पहलें

भारत सरकार एवं राज्य सरकारें महिलाओं को मत्स्य पालन में प्रोत्साहित करने हेतु कई योजनाएं चला रही हैं:

प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना

प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना ने ग्रामीण और तटीय क्षेत्रों की महिलाओं के जीवन में एक नई उम्मीद जगाई है। लंबे समय तक महिलाएँ मछली पालन में अपना श्रम तो देती थीं, लेकिन उन्हें पहचान और अवसर नहीं मिल पाता था। इस योजना ने उन्हें न केवल पहचान दी है, बल्कि आत्मनिर्भर और उद्यमी बनने का अवसर भी प्रदान किया है।सबसे बड़ा लाभ यह है कि महिलाओं को पुरुषों की तुलना में अधिक सब्सिडी दी जाती है। लगभग साठ प्रतिशत तक की यह आर्थिक सहायता उन्हें छोटे–छोटे मत्स्य उद्यम शुरू करने का आत्मविश्वास देती है। पहले जहाँ वे केवल सहायक भूमिका निभाती थीं, अब वे तालाब किराए पर लेकर उत्पादन का नेतृत्व कर रही हैं।इसके साथ ही, योजना में उन्हें आधुनिक तकनीक का प्रशिक्षण दिया जाता है। पारंपरिक ज्ञान तो उनके पास पहले से था, लेकिन अब उन्हें हैचरी प्रबंधन, बीज उत्पादन, प्रसंस्करण और ई–मार्केटिंग जैसी नई विधियाँ भी सिखाई जा रही हैं। इस प्रशिक्षण से वे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर अधिक उत्पादन कर रही हैं और उत्पाद की गुणवत्ता भी बेहतर बना रही हैं। महिलाओं को सामूहिक शक्ति का महत्व समझाते हुए योजना ने स्व–सहायता समूहों और सहकारी समितियों को भी बढ़ावा दिया है। समूह के माध्यम से वे तालाब किराए पर लेकर सामूहिक मत्स्य पालन कर सकती हैं। इससे उनकी लागत कम होती है और लाभ अधिक मिलता है। साथ ही, समूह में काम करने से आपसी सहयोग और आत्मविश्वास भी बढ़ता है।केवल उत्पादन ही नहीं, बल्कि प्रसंस्करण और मूल्य वर्धन के क्षेत्र में भी महिलाओं को प्रोत्साहन मिल रहा है। उन्हें मछली से अचार, सूखी मछली, पाउडर और फ्रोजन प्रोडक्ट जैसे वैल्यू एडेड उत्पाद बनाने के लिए प्रशिक्षण और संसाधन दिए जा रहे हैं। इन उत्पादों की बाजार में अच्छी कीमत मिलती है, जिससे उनकी आय कई गुना बढ़ जाती है।योजना ने महिलाओं की बाजार तक पहुँच भी आसान बना दी है। पहले वे अपने उत्पाद बेचने के लिए बिचौलियों पर निर्भर रहती थीं, लेकिन अब सरकार ने कोल्ड स्टोरेज, आइस प्लांट और फिश मार्केट जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराई हैं। इन बाजारों में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है, जिससे वे सीधे उपभोक्ताओं से जुड़ पाती हैं और उचित मूल्य प्राप्त करती हैं। इतना ही नहीं, मत्स्य पालन के दौरान आने वाले जोखिमों से बचाने के लिए महिलाओं को बीमा और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं से भी जोड़ा गया है। प्राकृतिक आपदा या दुर्घटना की स्थिति में यह सुरक्षा उन्हें न केवल आर्थिक मजबूती देती है, बल्कि मानसिक शांति भी प्रदान करती है।

राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड

राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड विशेष रूप से महिलाओं और युवाओं को इस क्षेत्र में सक्रिय भागीदारी और सशक्तिकरण का अवसर प्रदान करता है। राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड केवल एक वित्तीय सहायता देने वाली संस्था नहीं है, बल्कि यह जमीनी स्तर पर व्यापक कार्य करती है। आधुनिक हैचरियों की स्थापना से लेकर मत्स्य बीज महिलाओं की भागीदारी को राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड ने हमेशा से प्राथमिकता दी है। बोर्ड का मानना है कि महिलाएँ मत्स्य क्षेत्र की रीढ़ हैं। यही कारण है कि महिलाओं के स्व–सहायता समूहोंको तालाब किराए पर लेने और सामूहिक मत्स्य पालन करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। उन्हें मछली से अचार, पाउडर, सुखी मछली जैसे वैल्यू एडेड

उत्पाद बनाने का प्रशिक्षण और संसाधन दिए जाते हैं। छोटे स्तर पर प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित कर उन्हें कोल्ड स्टोरेज, आइस प्लांट और सुखाने की इकाइयों जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं। इतना ही नहीं, महिलाओं को सीधे बाजार से जोड़ने के लिए विशेष मछली मंडियों का निर्माण भी किया गया है, जिससे वे अपने उत्पाद बेहतर दाम पर बेच सकें। प्रशिक्षण शिविरों और कार्यशालाओं के माध्यम से राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड महिलाओं को केवल श्रमिक ही नहीं, बल्कि निर्णय लेने वाली और उद्यमी बनने का अवसर भी देता है। राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड अकेले काम नहीं करता, बल्कि यह राज्य सरकारों के साथ मिलकर योजनाएँ लागू करता है। ओडिशा, केरल, आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में महिला स्व–सहायता समूहों को राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड से सीधी सहायता प्राप्त हुई है। बिहार में जीविका कार्यक्रम के अंतर्गत राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड ने महिलाओं को तालाब प्रबंधन और मत्स्य बीज उत्पादन की ट्रेनिंग दी जाती है। वहीं, उत्तर–पूर्वी राज्यों में महिलाओं को झींगा पालन और ट्राउट मछली पालन की आधुनिक तकनीक सिखाई गई। इस बोर्ड की मदद से कई महिला समूह आत्मनिर्भर बन चुके हैं। उदाहरण के लिए, केरल में महिलाओं ने राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड की सहायता से फिश पिकल ब्रांड की शुरुआत की, जो अब राज्यभर में लोकप्रिय है। ओडिशा के मयूरभंज जिले में नीलकंठी महिला मंडल नामक महिला समूह ने राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड की मदद से सामूहिक तालाबों में मत्स्य पालन शुरू किया और अब लाखों रुपये की वार्षिक आय अर्जित कर रही हैं। बिहार की लीला देवी जैसी महिलाएँ राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्डसे प्रशिक्षण लेकर न केवल खुद मत्स्य पालन कर रही हैं, बल्कि अपने गाँव की अन्य महिलाओं को भी इस क्षेत्र से जोड़ रही हैं। इस प्रकार राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड ने भारत के मत्स्य क्षेत्र को नई दिशा और पहचान दी है। यह केवल उत्पादन बढ़ाने का साधन नहीं है, बल्कि ग्रामीण और तटीय समुदायों, विशेषकर महिलाओं के सशक्तिकरण का माध्यम भी है। राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड ने यह साबित किया है कि यदि महिलाओं को संसाधन, प्रशिक्षण और बाजार तक पहुँच दी जाए, तो वे मत्स्य पालन को केवल आजीविका का साधन ही नहीं बल्कि एक सफल उद्यम में बदल सकती हैं।

स्वंय सहायता समूह और महिला सहकारी समितियाँ

भारत में महिलाओं का सशक्तिकरण और ग्रामीण विकास आज सामाजिक–आर्थिक प्रगति के सबसे महत्वपूर्ण आयामों में से एक हैं। यह केवल महिलाओं की व्यक्तिगत उन्नति का सवाल नहीं है, बल्कि पूरे समाज की प्रगति और विकास से जुड़ा हुआ है। इसमें स्वंय सहायता समूह और महिला सहकारी समितियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण माध्यम साबित हुई हैं। ये संस्थाएँ न केवल महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से मजबूत बनाने में मदद करती हैं, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर और जागरूक नागरिक बनने का अवसर भी प्रदान करती हैं।

स्वंय सहायता समूह का महत्व

सेल्फ हेल्प ग्रुप्स छोटे समूह होते हैं, जिनमें आमतौर पर 10 से 20 महिलाएँ शामिल होती हैं। इन समूहों का उद्देश्य महिलाओं को वित्तीय और सामाजिक सशक्तिकरण प्रदान करना होता है। स्वंय सहायता समूह महिलाओं को बचत, ऋण और निवेश के माध्यम से आर्थिक रूप से सशक्त बनाते हैं। इसके अलावा, ये समूह महिलाओं को आपसी सहयोग, निर्णय लेने की क्षमता और नेतृत्व कौशल विकसित करने का अवसर भी प्रदान करते हैं। महिलाएँ जब स्वंय सहायता समूह के माध्यम से प्रशिक्षण और सहयोग प्राप्त करती हैं, तो वे अपने परिवार और समाज के लिए अधिक जिम्मेदार और जागरूक बनती हैं। उदाहरण के तौर पर, महिलो स्वंय सहायता समूह ग्रामीण महिलाओं को स्वरोजगार के अवसर प्रदान कर सकती हैं, जैसे कि हस्तशिल्प, खाद्य प्रसंस्करण, सिलाई–कढ़ाई, और स्थानीय उद्योग। इससे उनकी आय में वृद्धि होती है, उनका आत्मविश्वास बढ़ता है और समाज में उनकी प्रतिष्ठा में सुधार आता है। स्वंय सहायता समूह का यह

आर्थिक और सामाजिक समर्थन महिलाओं को जीवन के हर क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभाने के लिए सक्षम बनाता है महिला सहकारी समितियाँ भी स्वंय सहायता समूह की तरह महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। सहकारी समितियाँ महिलाओं को संगठित करती हैं और उन्हें सामूहिक शक्ति का लाभ देती हैं। ये समितियाँ महिलाओं को वित्तीय सहायता, उत्पादन क्षमता बढ़ाने, विपणन और व्यवसाय प्रबंधन की दिशा में मार्गदर्शन करती हैं। सहकारी समितियों का एक बड़ा लाभ यह है कि यह महिलाओं को सामूहिक निर्णय लेने और संगठनात्मक प्रबंधन की क्षमता सिखाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि महिलाएँ अपने समुदाय में नेतृत्व की भूमिका निभाने के लिए सक्षम होती हैं और समाज में उनकी भागीदारी बढ़ती है। इसकेअतिरिक्त, सहकारी समितियाँ स्थानीय संसाधनों का अधिकतम उपयोग करती हैं और ग्रामीण विकास में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करती हैं।

महिला सशक्तिकरण और सामाजिक बदलाव

स्वंय सहायता समूह और महिला सहकारी समितियाँ न केवल आर्थिक बल्कि सामाजिक सशक्तिकरण में भी महत्वपूर्ण हैं। जब महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र होती हैं, तो उनके परिवार में निर्णय लेने की क्षमता बढ़ती है। वे बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण पर अधिक ध्यान देती हैं। इसके साथ ही, ये महिलाएँ समाज में लैंगिक समानता और महिला अधिकारोंके प्रति जागरूकता फैलाने में भी योगदान देती हैं। महिला स्वंय सहायता समूह और सहकारी समितियाँ महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के साथ–साथ उन्हें समाज में सक्रिय भागीदार बनने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। जब महिलाएँ समाज में सक्रिय भूमिका निभाती हैं, तो उनके आसपास के समुदाय में भी सकारात्मक बदलाव आता है। यह ग्रामीण विकास, सामाजिक न्याय और समानताके लिए एक ठोस आधार प्रदान करता है

सफल महिला उद्यमियों के उदाहरण

मीनाक्षी अम्मा, केरल

मीनाक्षी अम्मा, केरल के अलप्पुझा जिले की निवासी, मत्स्य पालन के क्षेत्र में एक सफल और प्रेरणादायक महिला उद्यमी हैं। उन्होंने स्थानीय महिलाओं को संगठित करके एक स्व–सहायता समूह की स्थापना की और सामूहिक मत्स्य पालन की दिशा में कदम बढ़ाया। उनके प्रयास न केवल आर्थिक लाभ प्रदान करने वाले रहे, बल्कि उन्होंने महिलाओं को आत्मनिर्भर, सशक्त और समाज में सक्रिय भागीदार बनने का अवसर भी दिया। मीनाक्षी अम्मा का जन्म 1942 में केरल में हुआ। अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के बाद, विवाह के पश्चात वे अपने परिवार के साथ अलप्पुझा में बस गईं। यहाँ उन्होंने देखा कि महिलाएं पारंपरिक रूप से मछली पालन में शामिल हैं, लेकिन उन्हें न तो पहचान मिलती थी और न ही अवसर। इस असमानता और संभावनाओं की कमी ने उन्हें महिलाओं को संगठित करने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का संकल्प दिलाया। अपने लक्ष्य को साकार करने के लिए मीनाक्षी अम्मा ने 10 से 15 महिलाओं का एक समूह बनाया। इस समूह ने तालाब किराए पर लेकर सामूहिक रूप से मछली पालन की शुरुआत की। उन्होंने महिलाओं को मछली पालन के विभिन्न पहलुओं पर प्रशिक्षण दिया, जैसे कि तालाब प्रबंधन, बीज उत्पादन, और पोषण संबंधी देखभाल। इसके साथ ही, उन्होंने उन्हें मछली से अचार, सूखी मछली और पाउडर जैसे वैल्यू–एडेड उत्पाद बनाने की कला सिखाई। इस कदम ने न केवल महिलाओं की आय में वृद्धि की, बल्कि उनके आत्मविश्वास और सामाजिक प्रतिष्ठा में भी सुधार किया। मीनाक्षी अम्मा ने महिलाओं को आधुनिक मत्स्य पालन तकनीकें सिखाई, जैसे कि हैचरी प्रबंधन, बीज उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन। इसके अतिरिक्त, उन्होंने महिलाओं को सामूहिक निर्णय लेने और नेतृत्व कौशल विकसित करने के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया। इससे महिलाएं न केवल उत्पादन में सक्रिय हुईं, बल्कि व्यापार और सामुदायिक नेतृत्व में भी भागीदार बन गईं। मीनाक्षी अम्मा के प्रयासों से महिलाओं कीआर्थिक स्थिति मजबूत हुई। उनकी

सामूहिक गतिविधियों के कारण महिलाएं स्वतंत्र आय अर्जित करने लगीं और घर तथा समाज में निर्णय लेने की उनकी क्षमता बढ़ी। महिलाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा में सुधार हुआ और उनके परिवारों में शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण पर अधिक ध्यान देने की प्रवृत्ति विकसित हुई। मीनाक्षी अम्मा के प्रयासों को सरकार और गैर–सरकारी संगठनों का भी समर्थन मिला। सरकार ने उन्हें वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण और विपणन संसाधन उपलब्ध कराए। वहीं, गैर–सरकारी संगठन उन्हें सामाजिक जागरूकता फैलाने और अन्य महिलाओं को प्रेरित करने के लिए मंच प्रदान करते रहे।

शोभा देवी, पश्चिम बंगाल

शोभा देवी, पश्चिम बंगाल के दक्षिण 24 परगना जिले की निवासी, मत्स्य पालन के क्षेत्र में एक प्रेरणादायक महिला उद्यमी हैं। उन्होंने परंपरागत मत्स्य पालन को आधुनिक तकनीक और सामूहिक प्रयास के माध्यम से एक लाभकारी व्यवसाय में परिवर्तित किया। उनके प्रयास न केवल उनकी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने वाले रहे, बल्कि उन्होंने स्थानीय महिलाओं को आत्मनिर्भर और सशक्त बनाने का मार्ग भी प्रशस्त किया। शोभा देवी का जन्म और पालन–पोषण दक्षिण 24 परगना जिले में हुआ। पारंपरिक परिवेश में पली–बढ़ी, उन्होंने देखा कि महिलाएं मछली पालन में संलग्न थीं, लेकिनउनकी मेहनत का उचित मूल्य नहीं मिलता था। इससे प्रेरित होकर, उन्होंने छोटे तालाबों का उपयोग करके एक स्वावलंबी व्यवसाय स्थापित करने का निर्णय लिया। शोभा देवी ने सबसे पहले एक खाली पड़े तालाब को किराए पर लिया और मछली पालन की शुरुआत की। पहले साल ही उन्हें लगभग ₹50,000 की कमाई हुई। इससे उन्हें आत्मविश्वास मिला और उन्होंने और दो तालाब किराए परलेकर अपने व्यवसाय का विस्तार किया। शोभा देवी ने केवल अपने लिए ही नहीं, बल्कि स्थानीय महिलाओं को प्रशिक्षित और संगठित किया। उन्होंने महिलाओं को मछली पालन, तालाब प्रबंधन, बीज उत्पादन और पोषण संबंधी देखभाल में प्रशिक्षित किया। इससे महिलाएं न केवल काम में कुशल हुईं, बल्कि सामूहिक निर्णय लेने और नेतृत्व कौशल भी विकसित कर सकीं। शोभा देवी ने पारंपरिक मछली पालन के साथ–साथ झींगा पालन भी शुरू किया, जिसे पश्चिम बंगाल में अधिक लाभदायक माना जाता है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने मछली से वैल्यू–एडेड उत्पाद बनाने की तकनीक अपनाई, जैसे अचार, पाउडर और सूखी मछली। इससे उनकी आय कई गुना बढ़ी और स्थानीय बाजार में उन्हें सकारात्मक पहचान मिली। शोभा देवी के प्रयासों से न केवल उनका व्यवसाय सफल हुआ, बल्कि स्थानीय महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ हुई। उनकी सफलता ने महिलाओं में आत्मविश्वास और नेतृत्व की भावना जगाई। महिलाएं अब परिवार और समाज में निर्णय लेने में सक्रिय भूमिका निभाने लगीं। शोभा देवी को'ग्राम उद्यमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके अलावा, उन्हें सरकार और स्थानीय गैर–सरकारी संगठनों से प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और विपणन संबंधी संसाधन भी प्राप्त हुए। इस समर्थन ने उनके व्यवसाय को स्थायित्व और विस्तार प्रदान किया।

पद्मा राव, आंध्र प्रदेश

पद्मा राव, आंध्र प्रदेश की एक प्रेरणादायक महिला उद्यमी हैं, जिन्होंने पारंपरिक मत्स्य पालन को आधुनिक तकनीक और संगठनात्मक दृष्टिकोण के साथ सफल व्यवसायमें बदला। उन्होंने स्थानीय महिलाओं को संगठित किया और सामूहिक प्रयास के माध्यम से मत्स्य पालन को न केवल आजीविका बल्कि सशक्तिकरण का माध्यम बनाया। पद्मा राव का जन्म आंध्र प्रदेश में हुआ। पारिवारिक पृष्ठभूमि से जुड़े होने के कारण उन्हें पहले से ही मत्स्य पालन और कृषि कार्यों का अनुभव था। उन्होंने देखा कि महिलाएं इस क्षेत्र में मेहनत करती हैं, लेकिन उनके प्रयासों को उचित पहचान और समर्थन नहीं मिलता। इस कमी को देखकर, उन्होंने महिलाओं को स्वावलंबी बनाने और सामूहिक उद्यम स्थापित करने का संकल्प लिया पद्मा राव ने

स्थानीय महिलाओं को एकजुट कर महिला सहकारी समिति बनाई। इस समिति के माध्यम से उन्होंने सामूहिक तालाबों का संचालन किया और आधुनिक मत्स्य पालन तकनीकों को अपनाया। समिति ने न केवल उत्पादन बढ़ाया, बल्कि महिलाओं को निर्णय लेने और नेतृत्व कौशल विकसित करने का अवसर भी प्रदान किया। पद्मा राव ने महिलाओं को हैचरी प्रबंधन और बीज उत्पादन में प्रशिक्षित किया। उनकी हैचरी में सालाना लाखों मत्स्य बीज उत्पादित होते हैं, जिन्हें पूरे राज्य में वितरित किया जाता है। इस पहल से स्थानीय महिलाओं को स्थायी रोजगार और आय के स्रोत प्राप्त हुए। उन्होंने महिलाओं को जैविक मछली पालन की तकनीकसिखाई, जिससे पर्यावरण की सुरक्षा और उत्पादन की गुणवत्ता दोनों सुनिश्चित हो सके। इसके अलावा, उन्होंने प्रसंस्करण और विपणन के आधुनिक तरीकों की जानकारी दी, ताकि उत्पाद का मूल्य बढ़ सके और महिलाओं को संपूर्ण उद्यम प्रबंधन का अनुभव हो। पद्मा राव को प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना पीएमएमएसवाई के तहत वित्तीय सहायता प्राप्त हुई। इस सहायता से उन्होंने नए तालाब विकसित किए, प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित कीं और समूह की महिलाओं को उपकरण और संसाधन प्रदान किए। सरकार के समर्थन ने उनके उद्यम को स्थायित्व और विस्तार प्रदान किया। पद्मा राव के प्रयासों से महिलाओं की आर्थिक स्थिति मजबूत हुई। वे अब आत्मनिर्भर हैं और अपने परिवार और समाज में निर्णय लेने में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। उनकी पहल से महिलाओं में आत्मविश्वास, नेतृत्व और उद्यमिता की भावना विकसित हुई।

लीला देवी, बिहार

लीला देवी, बिहार के समस्तीपुर जिले की एक प्रेरणादायक महिला उद्यमी हैं, जिन्होंने कृषि कार्यों के साथ–साथ मत्स्य पालन में अपने कदम रखा और इसे एक सफल व्यवसाय में बदल दिया। उनका प्रयास न केवल उनके लिए आर्थिक स्वतंत्रता लेकर आया, बल्कि उन्होंने स्थानीय महिलाओं को भी सशक्त और आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। लीला देवी का जन्म समस्तीपुर जिले में हुआ। पारंपरिक परिवार में पली–बढ़ी, उन्होंने देखा कि महिलाएं अक्सर कृषि और मत्स्य पालन में सहायक भूमिका निभाती हैं, लेकिन उनके प्रयासों का उचित मूल्य नहीं मिलता। इस असमानता और अवसरों की कमी ने उन्हें स्वावलंबी बनने और अन्य महिलाओं को प्रेरित करनेका संकल्प दिलाया। लीला देवी ने डंजेलं डपजतं योजना के तहत प्रशिक्षण प्राप्त किया और अपने घर के पीछे बने छोटे जलाशय में मछली पालन की शुरुआत की। उन्होंने सस्ती दर पर मछली बेचकर स्थानीय बाजार में अपनी पहचान बनाई। पहले साल ही उन्हें स्थायी आय प्राप्त होने लगी, जिससे उन्हें आत्मविश्वास मिला और उन्होंने व्यवसाय का विस्तार किया। लीला देवी ने केवल अपने लिए ही नहीं, बल्किदूसरी महिलाओं को भी प्रशिक्षित किया। उन्होंने 10 अन्य महिलाओं को मछली पालन की तकनीक सिखाई और उन्हें भी आत्मनिर्भर बनाने का प्रयास किया। इस पहल से महिला समुदाय में सहयोग और सामूहिक प्रयासकी भावना विकसित हुई। लीला देवी ने पारंपरिक मछली पालन के साथ–साथ प्रसंस्करण और वैल्यू–एडेड उत्पाद बनाने पर भी ध्यान दिया। उन्होंने महिलाओं को मछली से अचार, सूखी मछली और पाउडर बनाने की तकनीक सिखाई। इससे उनकी आय कई गुना बढ़ी और स्थानीय बाजार में उनके उत्पादों को पहचान मिली। लीला देवी के प्रयासों से महिलाओं की आर्थिक स्थिति मजबूतहुई। वे अब परिवार और समाज में निर्णय लेने में सक्रिय भूमिका निभाती हैं। उनके सामूहिक प्रयास से महिलाओं मेंआत्मविश्वास, नेतृत्व और उद्यमिता की भावना विकसित हुई। इसके अलावा, उनके परिवार और आसपास के समुदाय में शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषणपर अधिक ध्यान दिया जाने लगालीला देवी को डंजेलं डपजतं योजना और स्थानीय सरकारी संगठनों से प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और संसाधन प्राप्त हुए। इस

सहयोग ने उनके उद्यम को स्थायित्व और विस्तारप्रदान किया।

ओडिशा की महिला एस एच जी समूह नीलकंठी महिला मंडल

ओडिशा के मयूरभंज जिले में स्थित 'नीलकंठी महिला मंडल एक प्रेरणादायक महिला स्व–सहायता समूह है, जिसने सामूहिक प्रयास और आधुनिक मत्स्य पालन तकनीकों के माध्यम सेस्थानीय महिलाओं का सशक्तिकरण किया है। यह समूह न केवल आर्थिक रूप से स्वतंत्र हुआ, बल्कि ग्रामीण समुदाय में महिलाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा और नेतृत्व क्षमता को भी बढ़ावा दिया। नीलकंठी महिला मंडल में प्रारंभ में लगभग 20 महिलाएं शामिल थीं। समूह का मुख्य उद्देश्य सामूहिक मत्स्य पालन, प्रसंस्करण और विपणनके माध्यम से आर्थिक सशक्तिकरण प्राप्त करना था। समूह ने यह सुनिश्चित किया कि सभी महिलाएं सक्रिय रूप से निर्णय लेने और व्यापार प्रबंधन में भाग लें। समूह ने सामूहिक तालाब किराए पर लेकर मत्स्य पालन की शुरुआत की। इस तालाब में विभिन्न प्रकार की मछलियाँ जैसे रोहू, कतला, मृगाल और झींगा का उत्पादन किया जाने लगा। सामूहिक प्रयास के कारण उत्पादन लागत कम हुई और लाभ में वृद्धि हुई। नीलकंठी महिला मंडल ने केवल उत्पादन तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि मछली प्रसंस्करण और वैल्यू–एडेड उत्पाद पर भी ध्यान दिया। उन्होंने सूखी मछली, अचार और मछली पाउडर जैसे उत्पाद तैयार किए। इन उत्पादों के लिए उन्होंने एक छोटा प्रसंस्करण इकाई स्थापित किया, जिससे उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ी और बाजार में मूल्य संवर्धन हुआ। समूह ने अपने उत्पादों के लिए "नीलकंठी मछली उत्पाद नाम से ब्रांड विकसित किया। उन्होंने स्थानीय और राज्य स्तरीय बाजारों में अपने उत्पादों को बेचना शुरू किया, जिससे महिलाओं की आय में स्थायी वृद्धि हुई। इस ब्रांड ने उन्हें स्थानीय बाजार में पहचान और सम्मान दिलाया।' नीलकंठी महिला मंडल ने केवल आर्थिक लाभ ही नहीं कमाया, बल्कि महिलाओं में नेतृत्व और आत्मविश्वासभी बढ़ाया। समूह के सदस्य अब निर्णय लेने, तालाब प्रबंधन और व्यवसाय संचालनमें सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। इस पहल ने समुदाय में महिलाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा में सुधार किया और अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणास्त्रोत भी बनी। समूह को राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड (एन एफ डी बी) और स्थानीय सरकारी योजनाओं से प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और संसाधन प्राप्त हुए। इसके अलावा, गैर–सरकारी संगठनों ने उन्हें विपणन और तकनीकी सहायता प्रदान की, जिससे समूह के प्रयासों को स्थायित्व और विस्तारमिला।

निष्कर्ष

मत्स्य पालन में महिलाओं का योगदान लंबे समय से अनदेखा किया गया है, जबकि सच्चाई यह है कि यह क्षेत्र उनके श्रम, अनुभव और दृढ़ संकल्प से ही जीवित और प्रगतिशील बना हुआ है। महिलाएँ पारंपरिक रूप से तालाबों की सफाई, मछलियों को चारा देना, बीज उत्पादन और नर्सरी प्रबंधन जैसे कार्यों से जुड़ी रही हैं। धीरे–धीरे समय के साथ वे प्रसंस्करण, विपणन और वैल्यू–एडेड उत्पाद निर्माण में भी अग्रणी भूमिका निभाने लगीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि मत्स्य पालन केवल पुरुषों का क्षेत्र नहीं है, बल्कि महिलाएँ इसकी रीढ़ की हड्डी हैं। अगर हम सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण से देखें तो महिलाओं का योगदान और भी गहरा है। मत्स्य पालन से प्राप्त आय को वे बच्चों की शिक्षा, परिवार के स्वास्थ्य और पोषण पर खर्च करती हैं, जिससे पूरे परिवार का जीवनस्तर ऊँचा होता है। यह केवल आर्थिक सशक्तिकरण नहीं बल्कि सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी है। जब महिलाएँ आत्मनिर्भर बनती हैं तो उनकी भागीदारी निर्णय लेने, समूह संचालन और सामुदायिक नेतृत्व में भी बढ़ जाती है। इस तरह मत्स्य पालन केवल आजीविका ही नहीं, बल्कि महिला सशक्तिकरण का सशक्त उपकरण बन जाता है। हालाँकि चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं वित्तीय संसाधनों की कमी, तकनीकी प्रशिक्षण का अभाव, सामाजिक पूर्वाग्रह और बाजार तक सीमित पहुँच जैसी समस्याएँ महिलाओं के

सामने दीवार की तरह खड़ी रहती हैं। लेकिन यह भी सच है कि सरकारी योजनाएँ जैसे प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना, राष्ट्रीय मत्स्य विकास बोर्ड की पहलें और महिला सहकारी समितियाँ इन बाधाओं को धीरे–धीरे कम कर रही हैं। महिलाओं को अधिक सब्सिडी, प्रशिक्षण और विपणन सहयोग देकर उन्हें उद्यमी और नेतृत्वकर्ता के रूप में आगे बढ़ने का अवसर दिया जा रहा है। देश के कई राज्यों से आए उदाहरण इस बात को और मजबूत करते हैं। केरल की मीनाक्षी अम्मा, पश्चिम बंगाल की शोभा देवी, आंध्र प्रदेश की पद्मा राव, बिहार की लीला देवी और ओडिशा का नीलकंठी महिला मंडल यह साबित करते हैं कि यदि अवसर मिले तो महिलाएँ मत्स्य पालन को एक लाभकारी और सतत व्यवसाय में बदल सकती हैं। इन सफल कहानियों से स्पष्ट है कि महिलाएँ न केवल खुद को बल्कि अपने पूरे समुदाय को आत्मनिर्भर बना सकती हैं। भविष्य की संभावनाएँ और भी व्यापक हैं। महिलाएँ मत्स्य बीज उत्पादन, हैचरी प्रबंधन, ई–कॉमर्स आधारित विपणन, मत्स्य पर्यटन और क्लाइमेट–स्मार्ट फिशिंग जैसी आधुनिक अवधारणाओं में अहम भूमिका निभा सकती हैं। बस जरूरत है उन्हें सही मंच, प्रशिक्षण, वित्तीय सहयोग और सामाजिक स्वीकृति देने की।

****

जलीय पारिस्थितिकी तंत्र पर कपड़ा रंगों से होने वाले प्रभाव

[1]शिवम दूबे, [1]लक्ष्मीपति एम टी, [3]सचिन ओंकार खैरनार, [2]लक्ष्मी प्रसाद, [1]ए.टी. रामचंद्र नाइक, [1]नरेंद्र कुमार मौर्य, [1]बिनल राजेशभाई खलासी, [1]ब्रम्हदेव यादव

[1]मत्स्य पालन महाविद्यालय, मंगलुरु (कर्नाटक)

[2]पंडित दीन दयाल उपाध्याय पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय, मथुरा (उत्तर प्रदेश)

[3]मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज (बिहार)

कपड़ा उद्योग जल निकायों में बड़ी मात्रा में जहरीले प्रदूषक छोड़ते हैं, जिससे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को काफी नुकसान पहुंचता है। खराब घुलनशील रंग जहरीले होते हैं क्योंकि यह जीवों द्वारा उनके अवशोषित होने और सीधे अंतर्ग्रहण द्वारा खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर जाते हैं। जल प्रदूषण अवांछित वस्त्र रंगों से युक्त अपशिष्टों के निर्वहन के परिणामस्वरूप होता है, जिनका उपयोग आमतौर पर कपड़ा, चमड़ा और कागज उद्योगों में किया जाता है। इसके अलावा, आबादी की बढ़ती मांग के कारण, कपड़ा की मांग में वृद्धि हुई है, और कपड़ा मिलों और उनके अपशिष्ट जल में आनुपातिक रूप से वृद्धि हुई है, जिससे धरती पर प्रदूषण की भारी समस्या उत्पन्न हो गई है। कपड़ा उद्योग रंगों की कुल मांग का दो–तिहाई हिस्सा प्रयोग में लाता है, इसलिए इस्तेमाल किए गए रंगों का लगभग 10–15 प्रतिशत रंगाई चरण के दौरान अपशिष्ट जल में बहा दिया जाता है। ये अपशिष्ट, जल उपचार संयंत्रों के लिए बड़ी चुनौतियाँ प्रस्तुत करते हैं और जलीय जीवों में जैव संचय के जोखिम को काफी हद तक बढ़ाते हैं। पर्यावरण में सालाना 280,000 टन रंग छोड़े जाते हैं, जो वैश्विक स्तर पर जल प्रदूषण में योगदान करते हैं, विशेष रूप से, कपड़ा उद्योग सिंथेटिक रंगों की वैश्विक खपत के आधे से अधिक के लिए जिम्मेदार है। विश्व बैंक की रिपोर्ट बताती है कि लगभग 17–20 प्रतिशत जल प्रदूषण कपड़ा उद्योगों से आता है, जो कपड़ों की रंगाई और परिष्करण के दौरान होता है। ये रंग वैश्विक स्तर पर सिंथेटिक रंगों का 70 प्रतिशत से अधिक प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप विशेष रूप से कपड़ा अपशिष्ट जल में पर्यावरणीय जोखिम पैदा करते हैं। इनमें से लगभग 10–15 प्रतिशत रंग प्रक्रियाओं के दौरान प्राकृतिक जल स्त्रोतों में मिल जाते हैं जिससे प्रदूषण की चुनौती और बढ़ जाती है।

कपड़ा रंगाई की शुरुआत

दुनिया की पहली सिंथेटिक डाई, "मौवाइन" की खोज "डब्ल्यू.एच. पर्किन" ने 1856 में की थी। उस समय से बड़ी मात्रा में सिंथेटिक रंगों का उत्पादन किया गया एवं व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए व्यापक रूप से डाई उपयोग किया जाने लगा। व्यावसायिक सिंथेटिक रंगों का उपयोग कई अलग–अलग उद्योगों में किया जाता है, जिसमें कपड़ा, चमड़ा, कागज छपाई, पेंट, भोजन, सौंदर्य प्रसाधन, रंगद्रव्य, प्लास्टिक और फार्मास्यूटिकल्स उद्योग आते हैं, जिनकी वार्षिक खपत 105 मीट्रिक टन है। प्राकृतिक रंगों के इस्तेमाल का सबसे शुरुआती निशान चीन में 2600 ईसा पूर्व में पाए गए थे। प्राकृतिक रंग पौधों से आते हैं। जड़ों, फलों, पत्तियों और छालों का इस्तेमाल रंग के रूप में किया जा सकता है। प्राकृतिक रंग में वे सभी रंग शामिल हैं जो पौधों, जानवरों और खनिजों जैसे प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते हैं।

वस्त्र रंगों का परिचय

रंगाई एक रासायनिक तकनीक है जो रेशों, धागों और कपड़ों को रंगने के लिए प्रसार और अवधारण के सिद्धांतों का उपयोग करती है। यह प्राकृतिक या सिंथेटिक रंगों का उपयोग करके किया जा सकता है। डाई को आम तौर पर एक जलीय घोल में डाला जाता है। रंगाई के दो सबसे महत्वपूर्ण कारक तापमान और समय हैं। पानी में डाई की

न्यूनतम मात्रा (≤ 1पीपीएम) की उपस्थिति प्रमुख है।

कपड़ा अपशिष्ट उत्पाद के प्रकार

कपड़ा उद्योग उन औद्योगिक क्षेत्रों में से एक है जो सबसे ज्यादा पानी का इस्तेमाल करते हैं। इसके अलावा, उद्योग द्वारा अपने विभिन्न विनिर्माण चरणों में कई तरह के रसायनों का इस्तेमाल किया जाता है। मुख्य रूप से, पानी का इस्तेमाल कपड़ों पर रसायनों के प्रयोग और निर्मित कपड़ों को धोने के लिए किया जाता है। उत्पादित कपड़ों का प्रकार और इस्तेमाल की जाने वाली रंगाई विधि निर्धारित करती है की प्रत्येक कपड़े में कितना पानी खपत होगा। तालिका 1 में क्रमशः विभिन्न कपड़ों के गीली प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक पानी का प्रतिशत सूचीबद्ध है।

क्र सं	प्रक्रिया	पानी की खपत (प्रतिशत)
1	ब्लीचिंग	38
2	रंगाई	16
3	प्रिंटिंग	8
4	बॉयलर	14
5	अन्य उपयोग	24

रंगों का वर्गीकरण:

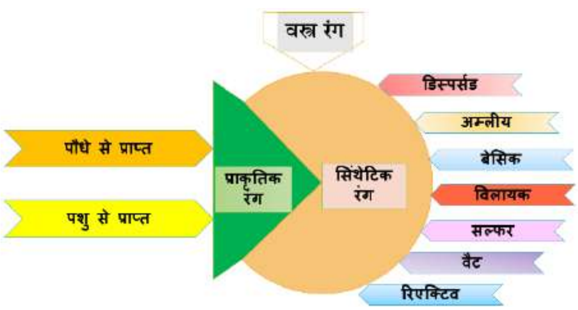

उद्योग से निकलने वाला डाई अपशिष्ट

सिंथेटिक रंग अपशिष्ट से तात्पर्य कपड़ा, चमड़ा, कागज और अन्य उद्योगों के निर्माण और प्रसंस्करण के दौरान उत्पन्न रंगीन अपशिष्टों से है, जो सिंथेटिक या प्राकृतिक रंगों का उपयोग करते हैं। इन अपशिष्टों को अक्सर जल निकायों में छोड़ दिया जाता है, जिससे पर्यावरणीय प्रदूषण होता है। सिंथेटिक रंगों में विभिन्न प्रकार शामिल हैं, जैसे कि एजो, एन्थ्राक्विनोन, एसिड डाई और सल्फर

उद्योग से निकलने वाला कपड़ा रंग अपशिष्ट

रंग। एजो रंग सबसे ज्यादा इस्तेमाल किए जाते हैं, जो 60–70 प्रतिशत डाई अपशिष्ट के लिए जिम्मेदार होते हैं। इस निरंतर प्रदूषण का पौधों, जल आपूर्ति, हवा और मिट्टी पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जो लोगों के लिए गंभीर स्वास्थ्य समस्याओं को बढ़ाता है।

विशिष्ट कच्चे कपड़ा रंगाई मिल अपशिष्टों की विशेषताएँ

जब औद्योगिक अपशिष्टों से नदियों और झीलों में इन पदार्थों को बिना सफाई के छोड़ा जाता है तब जल प्रदूषण होता है। जिसके कारण सिंथेटिक रंग जल निकायों की रासायनिक संरचना को बदलते हैं, पारिस्थितिक संतुलन को बाधित करते हैं, और

पीएच परिवर्तनों के कारण रासायनिक ऑक्सीजन मांग (सीओडी) और जैविक ऑक्सीजन मांग (बीओडी) को बढ़ाते हैं।

क्र सं	पैरामीटर	मान
1	पीएच	6.10
2	तापमान (°ब)	35.45
3	जैविक ऑक्सीजन मांग (मिलीग्राम/लीटर)	80.6000
4	रासायनिक ऑक्सीजन मांग (मिलीग्राम/लीटर)	80.6000
5	कुल निलंबित ठोस (मिलीग्राम/लीटर)	15.8000
6	कुल घुले हुए ठोस (मिलीग्राम/लीटर)	2900.3100
7	रंग (च्ज.ब्व इकाइयाँ)	50.2500
8	ट्रेस तत्व– जिंक, ताँबा, आयरन मैंगनीज आदि (मिलीग्राम/लीटर)	<10
9	तेल और ग्रीस (मिलीग्राम/लीटर)	10.30

जलीय पर्यावरण और मानव पर कपड़ा रंगों का प्रभाव

कपड़ा निर्माण अनुपचारित रंगाई और अपशिष्ट जल का निर्वहन करके पर्यावरण क्षरण में योगदान देता है, जो मनुष्यों, पौधों और जानवरों के लिए गंभीर खतरा पैदा करता है। इसके अलावा, जब मछलियाँ और अन्य जलीय जीव रंगों को निगल लेते हैं, तो ये पदार्थ विषाक्त मध्यवर्ती पदार्थों में परिवर्तित हो जाते हैं।

रंगों को हटाने की तकनीक:

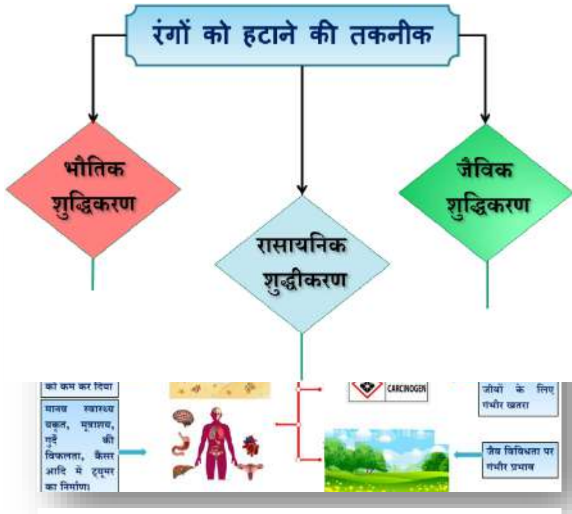

रंग युक्त वस्त्र अपशिष्ट जल का पर्यावरण, जलीय जीव और स्वास्थ्य पर प्रभाव

रंगों को हटाने के लिए भौतिक विधियाँः

कृषि सामग्री से निकलने वाले कचरे, प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले पदार्थों और औद्योगिक स्क्रैप सामग्री जैसे कई सस्ते संसाधनों का उपयोग रंगों को हटाने के लिए किया जा रहा है। इनमें सक्रिय कार्बन का उपयोग, कीचड़ का उपयोग, लाल मिट्टी का उपयोग, फ्लाई ऐश, मिट्टी का उपयोग आदि शामिल हैं।

रंगों को हटाने के लिए रासायनिक विधियाँ

कपड़ा उद्योग के अपशिष्टों से रंगों को हटाने के लिए, विभिन्न प्रकार की रासायनिक तकनीकों का उपयोग किया जाता है, जैसे कि हाइड्रोजन पेरोक्साइड, उन्नत ऑक्सीकरण, ओजोनाइजेशन, विलायक आदि निष्कर्षण विधि का प्रयोग किया जाता है।

विकसित ऑक्सीकरण

उन्नत ऑक्सीकरण तकनीक डी–कलराइजेशन प्रक्रिया में उपयोग की जाने वाली एक पारंपरिक पद्धति है। यह हाइड्रॉक्सिल रेडिकल निर्माण (ऑक्सीकरण एजेंट के रूप में) की प्रक्रिया पर आधारित है, जिससे क्रोमोजेनिक समूहों के साथ अभिक्रिया करने पर कार्बनिक पेरोक्साइड रेडिकल्स

का निर्माण होता है, जो बाद में उन्हें CO_2, H_2O और अकार्बनिक लवणों में बदल देता है।

ओजोनिसिनेशन प्रक्रिया

Cl_2 और H_2O_2 से अधिक, ओजोन को सबसे शक्तिशाली ऑक्सीडेंट माना जाता है। क्लोरीनयुक्त हाइड्रोकार्बन, फिनोल और कुछ अन्य हाइड्रोकार्बन को ओजोन द्वारा प्रभावी रूप से ऑक्सीकृत होते देखा गया है। कुछ अध्ययनों से पता चला है कि प्रतिक्रियाशील रंजक O_3 के साथ महत्वपूर्ण स्तर पर अपघटन प्रदर्शित करते हैं।

रंगों को हटाने के लिए जैविक विधियाँ

जैविक तकनीकों, को प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि वे अधिक किफायती, अधिक कुशल हैं, एवं कम द्वितीयक कीचड़ उत्पन्न करते हैं। विभिन्न प्रकार के कार्बनिक और अकार्बनिक संदूषक को माइक्रोबियल तकनीकों का उपयोग करके प्रभावी रूप से बायोरिमेड किया जा सकता है। बैक्टीरिया, फंगस और शैवाल सहित कई सूक्ष्मजीव जैव–विमोचन प्रक्रियाओं में शामिल हैं।

जीवाणु आधारित विधि

जीवाणु आधारित प्रक्रिया में कई प्रकार के सूक्ष्मजीव शामिल होते हैं। जीवाणु अपनी तेज वृद्धि के कारण रंगों को अधिक तेजी से रंगहीन करते हैं। रोडामाइन–बी डाई को हटाने के लिए क्रमशः 55 प्रतिशत, 50 प्रतिशत, 55 प्रतिशत, 46प्रतिशत, 56प्रतिशत और 56 प्रतिशत की निष्कर्षण क्षमता प्राप्त करने के लिए जीवाणु *लाइसिनीबैसिलस फ्यूसीफॉर्मिस, स्यूडोमोनस पुटिडा, एरोमोनस हाइड्रोफिला, प्लेकोग्लोसिसिडा मोंटेली* का उपयोग किया गया है।

कवक आधारित विधि

सिंथेटिक रंगों का विघटन, या कभी–कभी इसका पूरा होना, फफूंद प्रजातियों जैसेः *फ्यूजेरियम सोलानी, एस्परगिलस फ्लेवस, अल्टरनेरिया सोलानी, पेंसिलियम एक्सपेंसम, फोमिटोप्सिस कैरीआ, राइजोपस ओराइजे* और *एस्परगिलस नाइजर* द्वारा सबसे अच्छे तरीके से पूरा किया जा सकता है। मजबूत बाह्यकोशिकीय और अंतःकोशिकीय एंजाइम प्रणाली, जिसमें लिग्निन पेरोक्सीडेज, मैंगनीज पेरोक्सीडेज और लैकेस शामिल हैं, साथ ही मजबूत आकारिकी और विविध मेटाबोलिक गतिविधि, इन अपघटन विशेषताओं के लिए जिम्मेदार हैं। कवक प्रजातियों के माइसेलिया का एककोशिकीय जीवों पर एक फायदा है कि वे अघुलनशील पदार्थों को घुलनशील बनाने के लिए एंजाइम का उपयोग करते हैं।

शैवाल आधारित विधि

शैवाल अपने तेज विकास, उच्च निष्कासन क्षमताओं और बायोरिएक्टर और अपशिष्ट जल तालाबों सहित विभिन्न सेटिंग्स के लिए अनुकूलनशीलता के कारण फाइकोरेमेडिएशन के लिए एक मूल्यवान संसाधन हैं। सार्गासम प्रजाति, उल्वा प्रजाति, स्पाइरोगाइरा प्रजाति और स्पाइरुलिना जैसी शैवाल प्रजातियाँ फाइकोरेमेडिएशन में उपयोग किए जाने पर पोषक तत्वों के आत्मसात में सुधार कर सकती हैं और पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन को रेस्टोरेशन कर सकती हैं। शोध ने अपशिष्ट जल के उपचार, पोषक तत्वों को हटाने, कार्बन के पृथक्करण और कार्बनिक यौगिकों, भारी धातुओं और अतिरिक्त नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे प्रदूषकों के उपचार में फाइकोरेमेडिएशन की प्रभावशीलता का प्रदर्शन किया है।

निष्कर्ष

प्राकृतिक फाइबर, साथ ही अन्य जैव आधारित और बायोडिग्रेडेबल पॉलिमर सहित अधिक जैव आधारित फाइबर को शामिल करके, अपशिष्ट जल उपचार संयंत्रों पर प्रदूषण के बोझ को कम करना संभव है। जब बात कपड़ा अपशिष्टों से रंगों को हटाने की आती है तो बिना किसी नकारात्मक प्रभाव के अधिक प्रभावी जैविक तकनीकें अधिक भरोसेमंद होती हैं।

****

जलकृषि के लिए जलवायु परिवर्तन जनित दुष्प्रभाव

समीक्षा मिश्रा और सुजाता साहू
केंद्रीय मत्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई (महाराष्ट्र)

दशकों से लेकर लाखों वर्षों तक की अवधि में मौसम के सांख्यिकीय वितरण को जलवायु परिवर्तन कहा जाता है। यह औसत मौसम में बदलाव या औसत के आसपास मौसम की घटनाओं के वितरण में बदलाव के कारण हो सकता है। जलवायु परिवर्तन केवल किसी विशिष्ट क्षेत्र तक ही सीमित नहीं होता,यह संपूर्ण पृथ्वी पर भी काया बिस्तार कर सकता है। इसे मानवजनित जलवायु परिवर्तन के रूप में भी जाना जाता है, जिसे आम तौर पर "ग्लोबल वार्मिंग" के नाम से विख्यात है। जलकृषि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव मुख्य रूप से जल और वायु दोनों के तापमान में बदलाव के कारण पड़ता है। विशेष रूप से समुद्री पारिस्थितिकी में, यह प्रभाव समुद्र की सतह के तापमान, जल धाराओं, वायुमंडलीय गति, तरंगों और अन्य समुद्र विज्ञान से जुड़े परिवर्तनों के रूप में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन बदलावों से जलीय जीवों के जीवन चक्र, उनकी वृद्धि, प्रजनन और संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र पर गहरा असर पड़ता है। ऊर्जा आपूर्ति के लिए जीवाश्म ईंधन जैसे कोयला और तेल जलाए जाते हैं, जिससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ता है। वनों की कटाई से कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषण में कमी आती है, जिससे जलवायु परिवर्तन तेज होता है। इन गतिविधियों के कारण वैश्विक तापमान बढ़ रहा है और पर्यावरण असंतुलित हो रहा है।मानवीय गतिविधियों में पिछले कुछ वर्षों में वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N2O), और फ्लोराइडयुक्त गैसों सहित जी एच जी की मात्रा बढ़ती जा रही है। वर्ष 2010 में वैश्विक ग्रीन हाउस गैस (जी एच जी), विशेष रूप से कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में जलीय कृषि का योगदान 385 मिलियन टन अनुमानित किया गया था, जो उस वर्ष कृषि क्षेत्र के योगदान का 7 प्रतिशत था। पहले से ही, विश्व स्तर पर विभिन्न प्रमुख आर्थिक क्षेत्रों और सेवाओं पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव की सूचना दी गई है। जलीय कृषि में, जलवायु में कुछ बदलाव, जैसे तापमान में वृद्धि, अनियमित वर्षा, तथा वर्षा की तीव्रता और आवृत्ति में बदलाव हो रहा है। चरम मौसम घटनाएँ बढ़ रही हैं, जिससे जल संसाधनों पर प्रभाव स्पष्ट दिख रहा है, जबकि कुछ अन्य प्रभाव अभी उभर रहे हैं। हाल ही में, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों ने जलीय कृषि की स्थिरता को लेकर काफी ध्यान आकर्षित किया है। इसका कारण वैश्विक खाद्य सुरक्षा, पोषण और आजीविका में इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान है। क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर जलीय कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का व्यापक अध्ययन और समीक्षा की गई है।हालाँकि, इनमें से अधिकांश अध्ययनों में, जलीय कृषि पर जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों की खोज करने की प्रवृत्ति रही है, जबकि सकारात्मक प्रभावों पर बहुत कम ध्यान दिया गया है जो अनुकूलन रणनीतियों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। जलवायु परिवर्तन के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों का व्यापक अध्ययन उत्पादकों की तैयारियों को बढ़ावा देगा और उनके उत्पादन पर जोखिमों को कम करने में मदद करेगा। शारीरिक लक्षण (विकास, फीड सेवन, चयापचय, प्रजनन, व्यवहार) जैव रासायनिक प्रक्रिया (रक्त जैव रासायनिक संरचना में परिवर्तन, ग्लूकोज और हार्मोनल असंतुलन, रक्त कोशिका लसीका) और आनुवंशिक पहलू (तनाव प्रतिक्रिया जीन की अभिव्यक्ति में वृद्धि और परिणामस्वरूप अन्य उम्मीदवार उत्पादन–संबंधित जीन की अभिव्यक्ति), जो मछली को बीमारी और मृत्यु दर के प्रति बेहद संवेदनशील बनाते हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि पानी के तापमान में 1^0 सेल्सियस का परिवर्तन

मछली की चयापचय दर को 10 प्रतिशत तक बदल सकता है। मछलियों का चयापचय जल के तापमान पर निर्भर करता है। कम तापमान से चयापचय धीमा होकर वृद्धि और भोजन ग्रहण क्षमता घटती है, जबकि अधिक तापमान से ऑक्सीजन की मांग बढ़ती है और तनाव उत्पन्न होता है। अत्यधिक गर्मी से प्रजनन प्रभावित होता है और मृत्यु दर बढ़ सकती है। जलवायु परिवर्तन मछलियों के शरीर विज्ञान, व्यवहार, विकास और प्रजनन को प्रभावित करता है। यह समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता में भी बदलाव लाता है। आईपीसीसी 2018 के अनुसार जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को संबोधित किए बिना जलीय कृषि की स्थिरता असंभव है।

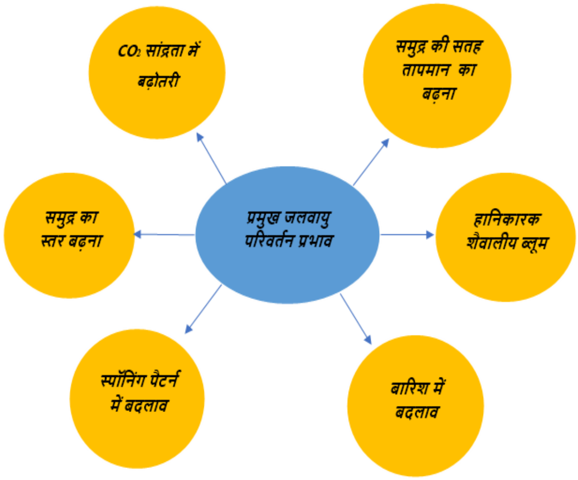

जलवायु परिवर्तन के प्रमुख प्रभाव और जोखिम

आकृतिः जलवायु परिवर्तन के प्रमुख प्रभाव और जोखिम

जलवायु परिवर्तन तापमान वृद्धि तक सीमित नहीं है यह एक जटिल घटना है जिसके विभिन्न प्रभाव हो सकते हैं। जिनमें समुद्र का अम्लीकरण , हानिकारक शैवाल का खिलना , समुद्र के स्तर में वृद्धि, वर्षा पैटर्न में परिवर्तन, समुद्र की सतह की लवणता में परिवर्तन और गंभीर जलवायु मौसम विज्ञान में वृद्धि शामिल है, जिन घटनाओं का संक्षेप में नीचे उल्लेख किया गया है।

बढ़ता तापमान

जलीय जंतुओं की वृद्धि और विकास में तापमान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मछली, पोइकिलोथर्मिक(Poikilothermic) होने के कारण, विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप तापमान भिन्नता के प्रति संवेदनशील ीवजं है। इस सदी में औसत वैश्विक तापमान में अनुमानित 1.50^{0} सेल्सियस वृद्धि के साथ, थर्मल तनाव होने से अधिकांश मछलियों, विशेष रूप से ठंडे पानी की प्रजातियों, जैसे अटलांटिक हैलिबट, सैल्मन और कॉड, और इंटरटाइडल शेलफिश की मृत्यु दर में वृद्धि होने की संभावना है। इसलिए, लंबे समय तक तापमान का तनाव कम उत्पादन पर केंद्रित विभिन्न तरीकों से जलीय कृषि उत्पादकता को प्रभावित कर सकता है। उदाहरण के लिए, क्रोनिक तनाव न्यूरोएंडोक्राइन और ऑस्मोरगुलेटरी सिस्टम को प्रभावित कर सकता है, कार्डियोरेस्पिरेटरी प्रदर्शन और एरोबिक स्कोप के साथ–साथ कई आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण प्रजातियों की प्रतिरक्षा प्रतिक्रियाओं को बदल सकता है। इसके अलावा, अधिकांश मछलियों की प्रजातियों के चयापचय (Metabolism), शरीर विज्ञान (Physiology), भोजन व्यवहार (Feeding Behavior) और विकास प्रदर्शन (Growth Performance) पर भी प्रभाव पड़ सकता है। इसके कारण प्रबंधन लागत में वृद्धि हो सकती है और उत्पादकता कम हो सकती है, जिससे जलीय कृषि उत्पादन की आर्थिक और सामाजिक स्थिरता) खतरे में पड़ सकती है।

तापमान भिन्नता के परिणामस्वरूप गहरे जल निकायों (Deep Water Bodie) में थर्मल स्तरीकरण (Thermal Stratification) से पर्यावरणीय स्थिरता (Environmental Stability) भी प्रभावित हो सकती है। यह पानी में पोषक तत्वों (Nutrient Distribution) के वितरण और प्रचुरता को बदल सकता है। यदि पोषक तत्व ऊपर उठते हैं, तो खुले पानी (Open Water) में काम करने वाले जलीय कृ षि उत्पादकों (Aquaculture Farmer) को गंभीर आर्थिक नुकसान (Economic Loss) हो सकता है।

महासागरीय अम्लीकरण

वायुमंडलीय CO_2 के अवशोषण के परिणामस्वरूप लंबे समय तक (आमतौर पर दशकों से) समुद्र के पानी के पीएच स्तर में गिरावट के कारण महासागरीय अम्लीकरण (ocean acidification) होता है। अनुमान है कि महासागरों में वायुमंडल की तुलना में लगभग 50 गुना अधिक CO_2 संग्रहित है। 1.5^0 सेल्सियस या अधिक ग्लोबल वार्मिंग पर महासागरों द्वारा CO_2 अवशोषण में अनुमानित वृद्धि से कई जलीय प्रजातियों की वृद्धि, विकास, कैल्सीफिकेशन, अस्तित्व और बहुतायत पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। पानी में CO_2 के बढ़ते संचय से अम्लता बढ़ती है, जिससे पी एच स्तर में कमी आती है। यह पानी की गुणवत्ता को प्रभावित करता है और जलीय कृषि उत्पादन प्रणालियों की पर्यावरणीय स्थिरता के लिए खतरा बन सकता है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादकता में गिरावट आ सकती है। इसके अलावा, समुद्र की अम्लता में वृद्धि से झींगा, मसल्स, सीप या मूंगा जैसे शैल बनाने वाले जीवों में मूंगा कंकाल (कैल्सीफिकेशन) के निर्माण के लिए आवश्यक कार्बोनेट की उपलब्धता कम हो जाती है, जो संभावित रूप से समुद्री जलीय कृषि उत्पादन को खतरे में डालती है। समुद्री शैवाल (मैक्रोएल्गल) का उत्पादन भी समुद्र के अम्लीकरण से प्रभावित हो सकता है, हालांकि इसका प्रभाव विभिन्न प्रजातियों द्वारा अकार्बनिक कार्बन ग्रहण करने की क्षमता पर निर्भर करेगा।

रोग और हानिकारक शैवाल प्रस्फुटन

बढ़ते तापमान से कई फिनफिश और शेलफिश प्रजातियों के बीच प्रतिकृति दर, विषाणु, जीवन चक्र अवधि और रोगजनकों के संचरण में तेजी आने की संभावना है। इसके अलावा, बढ़ते तापमान का दबाव जलीय कृषि में एपिजूटिक रोगों के उद्भव को बढ़ावा दे सकता है और गंभीर आर्थिक चुनौतियों का कारण बन सकता है। पहले से ही, एपिजूटिक रोगों का प्रकोप सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक बना हुआ है जो दुनिया के कई देशों में जलीय कृषि उत्पादन प्रणालियों की सफलता को सीमित करता है। कुल मिलाकर, जलीय कृषि उत्पादन प्रणालियों में बीमारियों की बढ़ती घटना से मुनाफा कम हो जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप जलीय कृषि उत्पादन के सामाजिक और आर्थिक स्थिरता पहलू प्रभावित होंगे।

समुद्र तल पे वृद्धि

ई पी सी सी (2018) द्वारा समुद्र स्तर में वृद्धि के अनुमान से संकेत मिलता है कि 2100 तक 20° सेल्सियस की तुलना में 1.5° सेल्सियस ग्लोबल वार्मिंग के तहत वृद्धि लगभग 0.1 मीटर कम होगी। हालांकि, इसकी तीव्रता और दर के साथ यह वृद्धि 2100 से आगे भी जारी रहने की संभावना है और वृद्धि भविष्य के जी एच जी मार्गों पर निर्भर होने की संभावना की आशंका है। समुद्र के स्तर में वृद्धि कई तटीय पारिस्थितिक तंत्रों को नष्ट कर सकती है, जैसे कि तटीय वनस्पति (Mangrove) और नमक दलदल, जो जंगली मछली भंडार को बनाए रखने के साथ–साथ जलीय कृषि उत्पादन के लिए बीज की आपूर्ति के लिए महत्वपूर्ण माने जाते हैं। उच्च समुद्र स्तर बढ़ने से खारे पानी का प्रवेश हो सकता है, जिससे तराई क्षेत्रों में जलीय कृषि प्रभावित होगी। तालाब, पिंजरे, टैंक और बाड़ों जैसी उत्पादन सुविधाएँ प्रभावित हो सकती हैं। हालाँकि, समुद्र स्तर में वृद्धि से झींगा और मिट्टी केकड़े जैसी प्रजातियों की खेती के लिए नए क्षेत्र उपलब्ध हो सकते हैं।

समुद्र की सतह की लवणता में परिवर्तन

बढ़ते तापमान और समुद्र परिसंचरण परिवर्तन के परिणामस्वरूप बढ़े हुए वाष्पीकरण के कारण या सीधे जलवायु परिवर्तन से प्रेरित होने के कारण समुद्री लवणता में भिन्नता हो सकती है। ये विविधताएं समुद्री परिसंचरण और स्तरीकरण को प्रभावित कर सकती हैं, और इसलिए, समुद्र की गर्मी, कार्बन और पोषक तत्व परिसंचरण को संग्रहीत करने की क्षमता प्रभावित हो सकती है। जलवायु परिवर्तन से इन विविधताओं के उत्पन्न होने की संभावना है, जिससे जलीय कृषि की पर्यावरणीय स्थिरता प्रभावित होगी। अधिकांश

जलीय जीव एक निश्चित लवणता स्तर में ही जीवित रह सकते हैं। लवणता में किसी भी प्रकार का परिवर्तन मृत्यु दर बढ़ा सकता है और उत्पादन में हानि हो सकती है।

बारिश में परिवर्तन

वर्षा प्रारूप में परिवर्तन जलीय कृषि उत्पादन और स्थिरता को दो सीधे विपरीत तरीकों से प्रभावित करेगा बढ़ी हुई वर्षा (बाढ़) और कम या शून्य वर्षा की अवधि (सूखा)। ई पी सी सी (2018) के अनुसार, किसी दिए गए क्षेत्र में ग्लोबल वार्मिंग के 1.5° सेल्सियस की तुलना में सूखे की घटनाओं से उत्पन्न जोखिम 2° सेल्सियस अधिक होने की संभावना है, जबकि बाढ़ की घटनाओं के प्रारूप की निश्चितता के साथ भविष्यवाणी करना मुश्किल है। वर्षा के बढ़े हुए स्तर, खासकर अगर यह भारी घटनाओं के रूप में होता है, तो निचले इलाकों में उत्पादन जोखिम बढ़ जाएगा। इन जोखिमों में बाढ़ के दौरान तालाबों से मछलियों का खोना, अवांछित प्रजातियों द्वारा तालाबों पर आक्रमण हो सकता है। सूखे की घटनाओं से पानी की कमी और गुणवत्ता में गिरावट आ सकती है, जिससे जलीय कृषि उत्पादन प्रभावित होगा। जलवायु परिवर्तन के कारण पानी की उपलब्धता में कमी होने की संभावना है, जिससे जलीय कृषि, कृषि, घरेलू उपयोग और उद्योगों के बीच पानी के लिए संघर्ष बढ़ सकता है।

गंभीर जलवायु घटनाएँ

तूफानी लहरों और तटीय कटाव की घटना को जलीय कृषि उत्पादन और अन्य संबंधित तटीय गतिविधियों के लिए सबसे खतरनाक खतरा माना जाता है। उदाहरण के लिए, पिंजरे के जलीय कृषि को चक्रवातों और लहरों के प्रभाव से अधिक जोखिम का सामना करना पड़ेगा। कुछ क्षेत्रों में कुछ मौसमों के लिए अनुमानित तूफानी वृद्धि से उपकरणों की विफलता के कारण जलीय जीवों के पलायन का खतरा भी बढ़ सकता है और साइट स्थानांतरण या उत्पादन प्रथाओं में बदलाव की आवश्यकता हो सकती है जो इन क्षेत्रों में जलीय कृषि की सामाजिक और आर्थिक स्थिरता को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकती है। बताया गया है कि हाल के दिनों में कई क्षेत्रों में गंभीर जलवायु संबंधी घटनाओं में वृद्धि हुई है और सभी जलवायु–संबंधित आपदाओं में कम से कम 80 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व किया जाता है। दूसरी ओर, तूफान जैसी गंभीर जलवायु घटनाएं संभवतः पानी के स्तंभों और पोषक तत्वों के मिश्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी जो पहले थर्मल स्तरीकरण के कारण कुछ स्तंभों तक ही सीमित थे जो जलीय कृषि उत्पादन की पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा दे सकते हैं। इसके अलावा, तूफान पानी के तापमान को कम करने और संबंधित जोखिमों में बहुत महत्वपूर्ण हो सकते हैं जो सुसंस्कृत और जंगली दोनों जीवों को नुकसान पहुंचा सकते हैं।

शमन और अनुकूलन विकल्प

जलवायु परिवर्तन को अब वैश्विक खाद्य उत्पादन के लिए जोखिम और उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा के लिए एक बड़ा खतरा माना जाता है। स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा, आजीविका, जल आपूर्ति, मानव सुरक्षा और आर्थिक विकास के लिए जलवायु परिवर्तन से संबंधित जोखिम अनुमानित 1.5° सेल्सियस ग्लोबल वार्मिंग के तहत बढ़ जाएंगे, जो की भविष्य में और भी भारी मात्रा में वृद्धि की उम्मीद है। ऐसे जोखिमों का सामना करने में, उद्योग और समुदायों दोनों को परिवर्तित संसाधनों से उभरते नए अवसरों का लाभ उठाकर बदलती जलवायु को कम करने और अनुकूलित करने की आवश्यकता होगी। शमन और अनुकूलन कृषक समुदायों, पारिस्थितिकी तंत्र और आबादी को सामान्य रूप से विभक्तिग्राही बनाने और जलवायु परिवर्तन से यथासंभव प्रभावी ढंग से और कुशलता से निपटने के लिए तैयार करने में मदद कर सकते हैं। शमन जलवायु परिवर्तन की दर को कम करने या उलटने पर केंद्रित है। हालाँकि, शमन जलवायु परिवर्तन का एक दीर्घकालिक समाधान है जिसके लाभ प्राप्त होने में काफी समय लग सकता है। इसके अलावा, प्रभावी शमन के लिए वैश्विक स्तर

पर सामूहिक कार्रवाई की आवश्यकता होती है क्योंकि अधिकांश जी एच जी समय के साथ जमा होते हैं और विश्व स्तर पर मिश्रित होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक प्रभाव पड़ता है। इसलिए, यह सुझाव दिया गया है कि बेहतर और प्रभावी परिणामों के लिए अनुकूलन रणनीतियों के साथ शमन को हाथ से लागू किया जाए ।

हालाँकि, मछली पर जलवायु परिवर्तन के सभी प्रभावों को टाला नहीं जा सकता है । कुछ अनुकूली और शमन उपाय इन हानिकारक परिणामों के प्रभाव को कम कर सकते हैं। इस दिशा में रणनीतियों में से एक मछली में विभिन्न तनावों को कम करने के लिए पोषण संबंधी हस्तक्षेप या न्यूट्रास्युटिकल (Nutraceutical) दृष्टिकोण है। अध्ययनों से पता चला है कि न्यूट्रास्यूटिकल्स तनावग्रस्त परिस्थितियों में भी मछली में रक्षा प्रणालियों को उत्तेजित करते हैं, और वे तनाव से होने वाले हानिकारक प्रभावों के विपरीत हैं, आजीविका का विविधीकरण सफल अनुकूलन की कुंजी में से एक हो सकता है क्योंकि यह उत्पादकों को जलीय कृषि उत्पादन प्रणालियों के संयोजन को शामिल करने का अवसर देता है। कृषि प्रणालियों जैसे अन्य क्षेत्रों के साथ, या तो एकीकृत या अलग प्रणालियों के रूप में, जिससे वे अपनी जीविका प्राप्त कर सकते हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से उचित अनुनेय बना सकते हैं।

****

Ms. Amisha Bharti
B.F.Sc (2024 Batch)

Ms. Pragya Sawan
B.F.Sc (2023 Batch)

Ms. Aradhana Kumari
B.F.Sc (2022 Batch)

मात्स्यिकी महाविद्यालय, किशनगंज के छात्रों द्वारा की गई चित्रकारी